केरल ज्योति

अक्तूबर 2023

ISSN 2320-9976
UGC Care - List

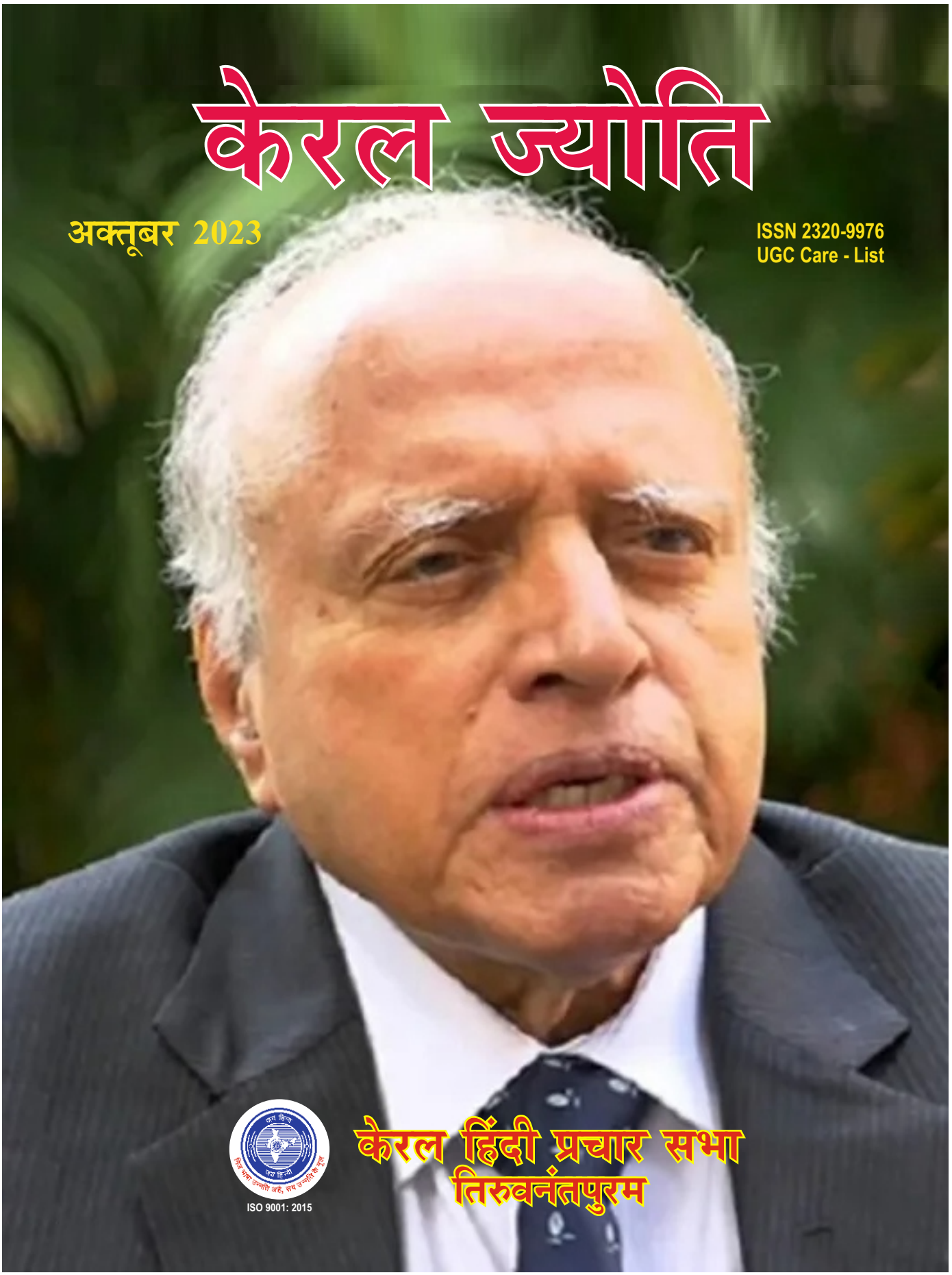

ISO 9001: 2015

केरल हिंदी प्रचार सभा
तिरुवनंतपुरम

हिंदी पखवाड़ा समारोह का उद्घाटन के.जयकुमार आई ए एस कर रहे हैं।

राजकमल समूह द्वारा आयोजित सात दिवसीय पुस्तक प्रदर्शनी एवं संगोष्ठियों का उद्घाटन श्रीमती ममता कालिया कर रही है।

श्री.के.जयकुमार आई ए एस उद्घाटन भाषण दे रहे हैं।

पुष्प : 60 दल : 7 अंक: **अक्तूबर 2023**

केरलज्योति

केरल हिंदी प्रचार सभा की मुख पत्रिका

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय की वित्तीय सहायता से प्रकाशित)

पूर्व समीक्षा समिति

प्रो.(डॉ). एन.रवींद्रनाथ
डॉ. के.एम. मालती
प्रो.(डॉ.) आर. जयचन्द्रन
प्रो.(डॉ). जयश्री.एस.आर

परामर्श मंडल

डॉ.तंकमणि अम्मा एस
डॉ.लता पी
डॉ. रामचन्द्रन नायर जे

प्रबन्ध संपादक

गोपकुमार एस (अध्यक्ष)

मुख्य संपादक/संपादकीय दायित्व

प्रो.डी.तंकप्पन नायर

संपादक

डॉ. रंजीत रविशैलम

संपादकीय मंडल

सदानन्दन जी
श्रीकुमारन नायर एम
प्रो.रमणी वी एन
चन्द्रिका कुमारी एस
एल्सी सामुवल
आनन्द कुमार आर एल
प्रभन जे एस
अधिवक्ता मधु बी (मंत्री)

सूचना : लेखकों द्वारा प्रकट किये गये मत उनके अपने हैं। उनसे संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

अनुक्रमणिका

संपादकीय 5

मानवीकरण के रुजहान के तहत 'चंद्र गहना से लौटती बेर' **प्रो. (डॉ.) मनु** 6

समकालीन हिंदी साहित्य एवं किन्नर विमर्श - **डॉ.गायत्री.एन** 9

वृद्ध विमर्श के आइने में 'रेहन पर रग्घू' - **डॉ.माजिदा.एम** 11

'कचनार' उपन्यास एक परिचयात्मक दृष्टि - **डॉ.षीबा शरत.एस** 13

पद्मा शर्मा के उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में राजनैतिक परिदृश्य - **कृष्ण कुमार थापक** 15

कविता - ममता- **आतिरा.जे.एस** 19

नरेंद्र कोहली और अमीश त्रिपाठी के दृष्टिकोण में सीता- **नीरजा. टी.के.** 20

निर्मल वर्मा की रचना में प्रवासी जीवन - **डॉ. षाजी.एन.** 24

भोजपुरी लोकगीतों में राष्ट्रीय चेतना **डॉ.शशिकला / डॉ.मनोज सिंह यादव** 27

नारी भी मानव है... साधन नहीं (कविता) - **डॉ.लता.डी** 30

साहित्य में किन्नर समाज का यथार्थ - **डॉ.षेनुजा मोल.एच.एन** 31

मैत्रेयी पुष्पा और रमणिका गुप्ता की आत्मकथा: एक तुलनात्मक अध्ययन - **अखिल. ए** 34

'अन्या से अनन्या' में प्रतिपादित नारी संघर्ष-**अश्विनी अजी** 36

देवनागरी लिपि वंदना (कविता) - **मोहन दि्ववेदी** 39

हिंदी साहित्य में दलित विमर्श: (दलित कहानियों के विशेष संदर्भ में) - **डॉ. धन्या.बी.** 40

समकालीन हिंदी कविता में बाज़ारवादी संस्कृति-**डॉ.अन्सा.ए** 42

दूनी गाँठ की गठरी - **मूल : के.एल. पॉल**
अनुवाद : प्रो.डी.तंकप्पन नायर व अधिवक्ता मधु.बी. 45

मुखचित्र : स्व. डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन

लेखकों से निवेदनः

• हिन्दी और इतर भारतीय भाषाएँ, साहित्य, संस्कृति आदि पर लिखी गयी उच्च स्तरीय मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ आमंत्रित हैं। • भाषा, साहित्य, संस्कृति आदि पर आयोजित समारोहों, चर्चाओं, संगोष्ठियों के समाचारों का भी स्वागत है। इन समाचारों को प्रस्तुत करनेवाले का नाम और पूरा पता भी लिख भेजें। • भारतीय भाषाओं से अनूदित कविता, कहानी भी भेजें। उनके साथ मूल लेखक से प्राप्त अधिकार पत्र भी प्रेषित करें। • प्राकाशनार्थ रचनाएँ साफ-साफ अक्षरों में लिखकर अथवा टंकित कर या **डी.टी.पी.** करके **सी.डी.** में भेजें। कृपया कार्बन प्रति न भेजें। • स्वीकृत रचनाएँ यथासमय पत्रिका में प्रकाशित की जाएँगी। • आप ई-मेल द्वारा भी अपनी रचनाएँ भेज सकते हैं। ई-मेल में Microsoft Word or Pagemaker फाइल में भेजिए। ई-मेल आईडी :khpsabha12@gmail.com • अपनी रचना के साथ पूरा पता (जिला, राज्य और पिनकोड सहित), लघु परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक, 'केरल ज्योति', केरल हिन्दी प्रचार सभा,
तिरुवनन्तपुरम-695 014

सभा का मुख्यालय और उसकी गतिविधियाँ

केरल की राजधानी तिरुवनंतपुरम के वषुतक्काड़ में सभा का मुख्यालय स्थित है। सभा के मुख्य परिसर में सभा के संस्थापक मंत्री की पावन स्मृति में श्री वासुदेवन पिल्लै स्मारक हिंदी ग्रंथालय, स्नातकोत्तर अध्ययन अनुसंधान केंद्र, साहित्याचार्य महाविद्यालय, केंद्रीय हिंदी महाविद्यालय, टंकण और आशुलिपि संस्थान, परीक्षा भवन, राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, राष्ट्रज्योति पब्लिशेर्स के प्रकाशन अधिकारी का कार्यालय, हिंदी अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय (बी.एड़) और केरल विश्वविद्यालय की मान्यता प्राप्त शोध केंद्र हैं।

विज्ञापन दर (साधारण अंक)

	मासिक	वार्षिक
आवरण पृष्ठ 4 (रंगीन)	रु.2500.00	25,000.00
आवरण पृष्ठ 2 एवं 3 (रंगीन)	रु.2000.00	20,000.00
साधारण पृष्ठ पूरा	रु.1000.00	10,000.00
साधारण पृष्ठ 1/2	रु.600.00	6,000.00
साधारण पृष्ठ 1/4	रु.350.00	3,500.00

एक प्रति का मूल्य रु. 25/- आजीवन चंदा : रु. 2500/- वार्षिक चंदा : रु. 250/-

A /c No. 57022786007 IFS Code : SBIN0070033
State Bank of India, Vazhuthacaud Branch

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : मंत्री, केरल हिन्दी प्रचार सभा, वषुतक्काडु, तिरुवनन्तपुरम-695 014.
दूरभाष:0471-2321378, 2329200, 2329459. फैक्स:0471-2329200 ई-मेल : khpsabha12@gmail.com

दूरभाष : 0471-2321378, 2329200, 2329459
फैक्स : 0471-2329459
मोबाईल : मुख्य संपादक : 9995680289 संपादक : 7898515222
E-mail : khpsabha12@gmail.com
Website : www.keralahindipracharsabha.com

केरलज्योति
सांस्कृतिक जागरण की मासिक पत्रिका
अक्तूबर 2023

संपादकीय

डॉ. एम.एस.स्वामीनाथन को भावभीनी श्रद्धांजलियाँ

हाल ही में पंचतत्व में लीन डॉ.एम.एस स्वामीनाथन भारतीय जन-हृदयों में एक चिरस्मरणीय व्यक्तित्व है जिनका संपूर्ण जीवन भारतीय जनता के भौतिक जीवन के उद्धार के लिए समर्पित है। उनका जन्म 7 अगस्त 1925 को तमिलनाडु के कुंभकोणम में हुआ। उनका देहांत 28 सितंबर 2023 में हुआ। प्रतिष्ठित समाचार पत्र 'डेली हिंदी मिलाप' के संपादकीय में इस संबंध में ठीक ही कहा गया है कि हरित क्रांति का रवि हुआ अस्त! उनका जीवन कृषि-नवाचार की एक अभूतपूर्व कहानी है जिसकी शुरुआत तिरुवनंतपुरम के महाराजा (यूनिवर्सिटी) कॉलेज में हुई। तदनंतर कैंब्रिज और विस्कासिन विश्वविद्यालयों में उच्च अध्ययन से स्वामीनाथन जी ने वह ज्ञान और अंतर्दृष्टि प्राप्त की जिसके द्वारा वे भारतीय कृषि की नियति को नया आकार दे सके। भारत के इतिहास में 'हरित-क्राँति' एक ऐतिहासिक मोड़ थी जिसमें डॉ.स्वामीनाथन सब वैज्ञानिकों में सबसे आगे थे। उन्होंने अपने अभूतपूर्व अनुसंधान के माध्यम से भारतीय कृषि परिदृश्य में गेहूँ और चावल की उच्च उपज देनेवाली किस्मों को पेश किया। उनमें वैज्ञानिक कौशल और किसानों की जिंदगी को बेहतर बनाने की अटूट प्रतिबद्धता थी। परिणामस्वरूप उन्होंने भारत के कृषि परिदृश्य को सदा के लिए बदल दिया।

डॉ. स्वामीनाथन का यह मत था कि कृषि में सच्ची प्रगति सिर्फ किसानों को खासकर छोटे किसानों को सशक्त बनाकर ही प्राप्त की जा सकती है। स्वामीनाथन जी ने भूमिसुधार, किसानों को ऋण पहुँचाने और कृषि-ज्ञान के प्रसार की अथक कोशिश की। उन्हीं के प्रयासों की परिणति के रूप में 2004 में "राष्ट्रीय किसान आयोग" की स्थापना हुई। "राष्ट्रीय किसा आयोग" का उद्देश्य भारतीय किसानों के सामने आनेवाली अगणित चुनौतियों का व्यापक समाधान करना था।

स्वामीनाथन जी ने भारतीयों को समझाया कि खाद्य सुरक्षा का भविष्य पर्यावरण संरक्षण के साथ कृषि उत्पादकता में सामंजस्य बढ़ाने की हमारी क्षमता पर निर्भर है। उन्होंने केवल हरितक्रांति का प्रारंभ नहीं किया था बल्कि कृषि के क्षेत्र में 'सदाबहार की क्रांति' की संकल्पना को भी साकार रूप दिया। सचमुच स्व. स्वामीनाथन जी का वियोग भारत के लिए ही नहीं बल्कि विशव भर के कृषकों के लिए एक अपूरणीय क्षति है। इसीलिए ब्रह्मलीन स्वामीनाथन जी के चिर वियोग पर दूसरे देशों के भी राष्ट्रनायकों और ख्यातिप्राप्त वैज्ञानिकों द्वारा हार्दिक शोक प्रकट किया गया है।

प्रो.डी.तंकप्पन नायर

मानवीकरण के रुजहान के तहत 'चंद्र गहना से लौटती बेर'

प्रो. (डॉ.) मनु

हर शायर नाज़ुक़ है, उनका दिल हर भीड़ में , हर हुजूम व तनहा में भी खूब हसास होता है, संवेदनशील होता है। हक़ीक़तों व अन्दाजों के खुले आस्मां की कुशादगी में शायर अपने दिल को चरने छोड़ देते हैं। उनका दिल हर वक़्त, हमेशा माशरे की नेकी की राह पकड़ लेता है। समाज की भलाई उनका ख्याल है, ख्वाब है, उनकी चाल ए राह है। सामाजिक बदलावों व तब्दीलियों के लिए उनका दिल धड़कता रहता है।साहित्य में जो जो वाद और प्रवृतियाँ हैं या बहसें व रुजहानात हैं; वे ज़ोर पकड़ कर किसी न किसी दौर में उभर कर आते हैं। इसलिए, रहस्यवाद, छायावाद, स्वच्छंदतावाद, साम्यवाद, तरक़्क़ीपसंद, प्रयोगवाद, नकेनवाद, नयी कविता, समकालीन कविता, साठोत्तरी कविता, अकविता, नंगी कविता, भूखी कविता, नारीवाद, पारिस्थितिक कविता आदि वक़्त वक़्त पर साहित्य में उभर आये काव्यान्दोलन हैं। मगर अपनी रचना संसार में जिस तरह के रु जहानात ज़्यादा दिखाई पड़ती हैं उसके मुताबिक़ पाठकों व आलोचकों द्वारा वह किसी वाद के भीतर समाया जाता है। केदारनाथ अग्रवाल जी प्रगतिवादी कवि हैं । मगर उनकी एक खूबसूरत कदरती रचना है चंद्र गहना से लौटती बेर। मानवीकरण के रु जहान छायावाद व स्वच्छंदतावाद की एक खासियत है। मानवीकरण अलंकार पश्चिम की देन है। क़दरती चीज़ों में इंसानी जज़्बों का बयान मानवीकरण है। जहां चेतन,अचेतन अवस्था को मनुष्य के क्रिया कलापों से जोड़ा जाए वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है।[1] यह अंग्रेजी में humanisation या Personification of Nature से जाना जाता है। जब इंसानी जस्बात को क़दरती अशिये में बयान किया जाय वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है । इस शोध का मक़सद यह है कि इस नज़्म की व्याख्या करते हुए उसमें अभिव्यक्त मानवीकरण का इज़हार दिखाना है ।

(कुंजी शब्द : रु जहान, चंद्र गहना, मुरैठा, चना, अलसी, सरसों, बगुल , सुग्गा, सारस)

केदारनाथ जी बुनियादी तौर पर मुहब्बत का कवि हैं पर उनकी नज़्मों में शोषित पीड़ित आम लोगों की नवा भी वजूद है । यह नवा तरक़्क़ीपसंद आंदोलनों के पहले उनकी रचनाओं में मौजूद थी । उनकी रचनाओं में क़ुदरत की खूबसूरती का भरपूर इज़हार हुआ है। उसमें सिर्फ पहाड़ों , दरियों, आबशारों, झरनों, जगलों, परिंदों की ही खूबसूरती नहीं बल्कि खेतों, खलिहानों, किसानों , काश्तकारों , मज़दूरों, आम लोगों , गलियों, बस्तियों, व कस्बों की भी खूबसूरती शामिल है।

'चंद्र गहना' से लौटकर केदार जी रेलगाड़ी के इंतज़ार में स्टेशन पर खड़ा है। गाडी देर होकर दौड़ रही है तो शायर वहाँ के मंज़रों की खूबसूरती का एहसास हासिल करने के लिए खतों के बीच के मेड़ पर तनहा होकर बैठ जाते हैं। देही माहौल के खेत खलिहानों का बयान उन्होंने मानवीकरण के तेज़ अंदाज़ में करने के लिए पहले चने और अलसी को लेते हैं। खेत की पगडंडियों की तरह खेतों के बीच के मेड़ भी खूब खूबसूरत हैं । उस मेड़ पे तन्हा बैठकर केदार जी अपने अंदाज़ का उड़ान भरता है। खेत में लगे हुए सब्ज़ चनों पर उनकी पैनी नज़रें पड़ती हैं, शायर भरोसा रखता है कि शहरी मंज़रों से ज़्यादा देही क़ुदरती मंज़र किसी को भी अपनी तरफ़ कशिश कर देने में कामयाब है।

महज एक बीते के बराबर यह सब्ज़ चना छोटे क़द का है, खेत में हवा संग सब्ज़ चने का लहलहा रहने का तर्ज़ खूब अच्छा लगता है। सब्ज़ चने के उपरी हिस्से पर गुलाबी रंग का गुल खिला हुआ है, वह सर पे बाँधे साफ़े की तरह दिखयी देता है। यह फितरती मंज़र निहारकर उन्हें ऐसा लगता है कि एक दूल्हा पगड़ी पहने सज धज कर मलबूस हुए खड़ा है। जैसे कि केदार जी के लफ़्ज़ों में "एक बीते के बराबर/यह हरा चना बांधे मुरैठ शीश पर छोटे गुलाबी फूल का/सज कर खड़ा है"[2]

गुलाबी रंग के गुल सज धज कर खड़े हुए छोटे कद वाले सब्ज़ चने को पगड़ी पहने होकर मलबूस खड़े हुए एक दूल्हे की तरह दिखाके शायर ने मानवीकरण का बयान किया है। बस इस मानवीकरण के रु जहान के साथ अलसी पौधे पे भी इंसानी जज़्बे का बयान उन्होंने किया है। सब्ज़ चने के संग संग अलसी भी उगा हुआ है। अलसी बेहद दुबली पतली व झुनझुनी है। हवा की झोंकों से

उसकी हरकत के अमल को शायर ने जिस्म की झुनझुरी व कमर की लचीली कह डाला है। केदार जी ने देखा है कई सब्ज़ चने के ऊपरी हिस्से पे गुलाबी रंग का गुल है तो अलसी के उपरी हिस्से पे नीले रंग का फूल फूला है। शायर उस पर इंसानी जस्बा प्रदान करते हुए कहते हैं कि अलसी के फूले नीले रंग के फूल को कौन दिल से छुयेगा उसको वह नायिका अपना दिल दान कर देगी।

"पास ही मिलकर उगी है।बीच में अलसी/हठीली/ देह की पतली, कमर की है/ लचीली, नीले फूले फल को सिर पर/ चढ़ाकर /कह रही है जो /छुए यह, दूँ हृदय का दान उसको।"(3)

फिर सयानी सरसों पर शायर की नज़र पड़ जाती है। यह सयानी सरसों सब्ज़ चने और अलसी के बीच में पड़ी हुई है। वह हल्दी आदि लगाकर दुल्हन की साज सज्जा में खेत रूपी चँदोवा व मंडप में बैठी है। शायर को लगता है कि फाल्गुन का महीना खुद होली का गीत 'फाग' गा रहा हो। सरसों को इस तरह बयान करके एक बार फिर शायर ने इंसानी जस्बे को सरसों पर लगा दिया है। सरसों को देखकर उन्हें ऐसा महसूस हो रहा है कि सरसों सयानी दुल्हन बन कर स्वयं वर के लिए शामियाने में आ गयी हो। सरसों में भी मानवीकरण का इस्तेमाल किया गया है। शायर के दिल में फितरती खूबसूरती की तरफ प्यार के जस्बे की पैदायशी होने लगती है।

और सरसों की न पूछो /हो गई सबसे सयानी / हाथ पीले कर लिए हैं /ब्याह मंडप में पधारी। (4)

फ़ितरत से शायर का जो अटूट अंदरूनी रिश्ता है, उस बुनियाद पे खड़े रहनेवाले केदार जी आगे आगे कहते हैं कि फाल्गुन का महीना होली का फाग गीत गाता हुआ आया है । शायर को लगता है कि स्वयंवर हो रहा है। शायर के दिल में क़ुदरत से गहरे अनुराग का जस्बा उठ रहा है। कवि को लगता है कि गांव की हरियाली व खूबसूरती उन्हें मंज़र बहुत कुछ भाने लगी है । उस विजन में उन्हें लगता है कि दूर पड़े सौदे के नगर से भी देही की हरियाली उपजाउ ज़मीन बेहत्तर है। इमारतों व सौदे की आवाज़ों से भरे शहर से कई गुना बेहतर है देही के मंज़र और उपजाउ ज़मीन। तिजारती नगर में प्यार का क़सर है तो खेतों पड़े देही की उपजाउ ज़मीन में प्यार का कोई कसर नहीं है ।

फिर खेत में बसे तालाब और उसकी लहरियों पर शायर की नज़रें पड़ जाती हैं। तालाब के पानी से हवा का खेल नज़रों के लिए अमन का साया बिछा देता है। हवा की वजह पोखर में लहरियाँ उन्पन्न होने लगी हैं। वहीं बगल में आसमान तले भूरी घास उगी हुई है। तालाब, आसमान और घास के रंगों का बयान करके फ़ितरत को एक रंगशाला के तौर पर दिखाने का शायर का अंदाज़ खूब सराहनीय है। जब सूरज की रोशनी तालाब के पानी में पड़ती है तो उसका अक्स पानी पर चांदी के खंभे की तरह नज़र आता है। वह शायर की आँखों में भी चमक रहा है। देही माहौल का फितरती माहौल किसी भी एहसास दिल को अपनी तरफ कशिश देने में काबिल है । साहिल ए तालाब में कई पत्थर पड़े हुए हैं, वे पत्थर खामोश होकर लगातार पानी पी रहे हैं, लगातार पानी पीने के बाद भी उसकी प्यास बुझती नहीं है। शायर का तस्वीरी तर्ज़ खूब दिलकश है । इसमें एक पोशीदा माना भी वजूद है कि पानी के भीतर पत्थर है और वह पत्थर लगातार पानी पी रहा है। पानी के बाहर भी पत्थर । लहरियाँ उठने से उसको भी पानी मिल रहा है। मगर उसकी प्यास कभी भी बुझ नहीं पाती है। चौरस तर्ज़ पे लफ़्ज़ों को शायर ने यों जोड़के लिखा है।

"है कई पत्थर किनारे /पी रहे चुपचाप पानी/प्यास जाने कब बुझेगी। (5)

खेत में परिंदे भी हैं । शायर की पैनी परवाह उसपर भी पड़ जाती है। तालाब या मछलियों पर परिंदों की योरिश को खूब संजीदगी तर्ज़ पर शायर ने उकेर दिया है। तालाब में एक बगुला अपनी टाँग पानी में डुबाए चुपचाप खड़ा है। वह पानी में मछली को देखता है तो अपनी फ़रेब खोखली नींद छोड़कर मछली पर फ़टाफ़ट हमला करते हुए अपनी नुकीली चोंच में उसे दबाकर अपने गले में डालता है। पर एक काले माथे वाले होशियार परिंदा अपने सफ़ेद परों के झपाटे मरकर तालाब के दरमियानी हिस्से में टूट पड़ती है और चंचल सफ़ेद मछली को अपनी चोंच में दबाकर आसमान की तरफ उड़ जाता है। खुराक के लिए तालाब के पास शिकारी परिंदों का आने जाने का मंज़र खूब सुहाना सा लगता है।

तालाब से थोड़ी उंचाई पर रेल की पटरियाँ बिछाई गयी हैं । रेलगाड़ी के आने जाने में देरी लग जाती है, सही वक्त पर गाडी न आ जाने की वजह शायर को थोड़ा वक्त मिल

गया है। वह वक्त शायर फितरती खूबसूरती में खुद को डुबाने और रचना की गहराई पे जाने के लिए इस्तेमाल कर देते हैं। थोड़ी दूर पे चित्रकूट की अनगढ़, सख्त , ख़ुरदरी, चौड़ी व कम उंचाई की पहाड़ियाँ दिखाई देती हैं। माना यह है कि वह जगह पहाड़ियों से घिरी हुई है। उसकी बंजर ज़मीन में कांटेदार और बदसूरत दरख्त पड़े हुए हैं। वहाँ रींवा के शजर भी देखने को मिलते हैं ।

"बाँझ भूमि पर / इधर-उधर रींवा के पेड़ /काँटेदार कुरूप खड़े है।"(6)

चित्रकूट की पहाड़ियों में बसनेवाले सुग्गे की सुरीली आवाज़ शायर के लिए बेहद ख़ुशी प्रदान कर देती है। सुग्गे की आवाज़ हवा में टें टें टें टें की तरह फ़ैल जाती है।

"सुन पडता है /मीठा-मीठा रस टपकाता /सुग्गे का स्वर /टें टें टें टें;"(7)

कवि पंत ने भी फ़ितरती बयान के मामले में इस तरह तस्वीर उकेर दी है -

"बांसों का झुरमुड़/ संध्या का झूट पुट /चहक रही थी चिड़िया / टी वी टी टु टु टु ।"(8)

जब सारस की टिरटों टिरटों आवाज़ जंगल की हरियाली को चीरते हुए आती है और उस आवाज़ के उठते गिरते लय पे शायर एकदम फ़िदा हो जाते हैं और उनका दिल चाहता है कि सारस के संग खुले असमान में उड़ जाये। सारस पंछी हमेशा अपना घोंसला तालाब, झील, ताल तलैया, दलदलदार ज़मीन के पास ही बना देता है। सच्ची प्रेम कहानी के ज़रिए शायर यह बताना चाहता है कि यह पंछी सारस (क्रौंच) हमेशा जोड़ों में बसना चाहता है और सारी ज़िन्दगी एक साथ रहना चाहता है। अटूट प्यार से अमर रिश्ता बाँध के जीना चाहता है । अपने साथी की मौत किसी भी वजह हो जाय दूसरा मौत को गले लगायेगा। क्रौंचों की ज़िन्दगी सच्ची दास्तान ए मुहब्बत की खूबसूरती मिसाल है, बानगी है । इसलिए ही आदि कवि वाल्मीकि क्रौंचों पे हुए आखेट को बर्दाश्त न कर निषाद से यों यह बता दिया होगा कि मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम? शाश्वती? समा? । यत्क्रौंचमिथुनादेकम् अवधी? काममोहितम् ? एक दिन ब्रह्ममूहूर्त में वाल्मीकि ऋषि ग़ुसल व सुबह के रोज़ाने काम के लिए गंगा नदी के पास जा रहे थे। वाल्मीकि के कपडे लेते हुए उनके चेले भारद्वाज मुनि भी संग थे । मार्ग में उन्हें तमसा नामक नदी मिलती है। पाक पानी देखके वाल्मीकि वहाँ से स्नान करने के लिए तैयार हो जाते हैं । जब ऋषि धारा में प्रवेश करने के लिए क़ाबिल जगह ढूंढ रहे रहे थे तो उन्होंने प्रणय-क्रिया में लीन क्रौंच पंछी के जोड़े को देखा। उन्हें देखकर वाल्मीकि ऋषि को खूब ख़ुशी होती है। क्रौंचों पर बाण चलाने के लिए खड़े हुए अहेरी को देखकर वाल्मीकि ने यह श्लोक गाया। अहेरी का एक बाण नर पंछी पर लग जाता है। नर पंछी चीत्कार करते, तड़पते हुए पेड़ से नीचे गिर जाता है। मादा पंछी दिल तोड़कर रोने लगती है। उसके वंशज क्रौंचों को केदार भी तालाब के पास देखते हैं। क्रौंचों के लिए बारिश मौसम खूब ख़ुशी है वह उसका प्रजनन का समय है। रक़्स की शरुआत से नयी पीढ़ी को बनाये रखने का काम शुरू हो जाता है। शायर के लफ़्ज़ ज़रा पढ़िए।

"सुन पड़ता है / वनस्थली का हृदय चीरता/उठता गिरता, /सारस का स्वर /टिरटों टिरटों;/मन होता है/ उड़ जाउँ मैं /पर फैलाए सारस के संग/जहाँ जुगुल जोड़ी रहती है /हरे JÉÉ¨ ÉÉ°ÉSSÉÓ|ÉÉ±ÉEÉÓ°ÉÉÖ±ÉÉ SÉ{ÉÉSÉ{ÉÉ" (9)

मुहावरे, मानवीकरण, तस्वीरी तर्ज़ का बयान आदि से शायर ने इस नज़्म को बेहद सजा दिया है, सँवार दिया है। चना, अलसी व सरसों में उन्होंने मानवीकरण का प्रयोग किया है। इस मानवीकरण के रुजहान से केदार जी नज़्म की शान और बढ़ गयी है। बीते के बराबर, हृदय का दान, हाथ पीले करना आदि मुहावरों का प्रयोग ज़रूर ही दिलकश है।

सन्दर्भ संकेत

1. गूगल सर्च : मानवीकरण अलंकार की परिभाषा , पहचान कविता और उदाहरण
2. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
3. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
4. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
5. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
6. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
7. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर
8. गूगल सर्च प्रकृति प्रेमी सुमित्रा नंदन पंत
9. गूगल सर्च केदारनाथ : चंद्र गहना से लौटती बेर

प्रोफसर & विभागाध्यक्ष, सेंट्रल यूनिवेर्सिटी, कासरगोड

समकालीन हिंदी साहित्य एवं किन्नर विमर्श

डॉ. गायत्री.एन

समकालीन हिंदी साहित्य में आजकल अनेक नई प्रवृतियाँ देखने को मिलते है। दलित,आदिवासी अल्पसंख्यक समुदाय नयी नारीवादी दृष्टि से साहित्यिक विधाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन आजकल हो रहे हैं। इसी क्रम में भारतीय समाज में मौजूद एक विशेष वर्ग किन्नर समुदाय का जीवन भी आज हिंदी साहित्य का प्रमुख अंग हो गया है पहले तो एक समुदाय साहित्य की मुख्यधारा में अपनी पहचान दर्ज कराने में असमर्थ रहा। पौराणिक काल में रामायण में राम -रावण युद्ध में राम की सेना वाहिनी में वानर सेना के साथ कोल, किरात,किन्नर और भील आदि जनजातियों की सेना भी सम्मिलित थी। किन्नर एक अन्य जनजाति के रूप में रामायण महाकाव्य में उल्लिखित है। किन्तु यह नपुंसक समुदाय नहीं था। महाभारत कथा में अर्जुन देव लोक में उर्वशी के शाप से नपुंसक रूप धारण करने को अभिशप्त हो जाता है। पांडवों के अज्ञातवास काल में महाराज विराट के आश्रम में अर्जुन नृत्यकला के आचार्य बृहन्नला का रूप धारण कर विराट राजा की सुपुत्री उत्तरा को नृत्यकला में पारंगत कराता है। महाभारत कथा में एक अन्य प्रसंग में भीष्म के द्वारा तिरस्कृत राजकुमारी अंबा अपने अपमान का प्रतिकार करने के लिए कुरु क्षेत्र के युद्ध में नपुंसक शिखंडी के रूप में भीष्म के सम्मुख प्रकट होकर उनकी मृत्यु का कारण बनती है। बृहन्नला और शिखंडी दोनों ही किन्नर के रूप में पुराणों में वर्णित है।

हिंदी साहित्य में किन्नर साहित्य का उदय आम लोगों में किन्नरों के प्रति घृणा और अलगाव के व्यवहार में परिवर्तन लाया है। किन्नर जाति के लिए अनेक गैर सरकारी संगठन और सामाजिक कार्यकर्ता आजकल आवाज़ उठा रहे हैं।

हिंदी कथा साहित्य में कुछ चुनिंदे साहित्यकार भारत के विभिन्न किन्नर समुदाय एवं उनके जीवन को वास्तविकता के साथ उद्घाटन कर रहे हैं। जिसके फलस्वरूप भविष्य में यह समुदाय द्वारा मानवाधिकारों की जो लड़ाई व्यापक स्तर पर लडी जा रही है उसमें जागरूक समाज उनके साथ उनके पक्ष में खड़ा हो जाएगा।

आजकल अनेक साहित्यकारों ने किन्नर या थर्डजेंडर की समस्याओं पर आधारित रचनाओं द्वारा अपने साहित्य क्षेत्र को विस्तृत कर समाज से अपना कर्तव्य निभा रहे हैं। इनमें प्रमुख हैं महेंद्र भीष्म,नीरजा माधव, संजीव, भगवंत अनमोल आदि। आजकल भारतीय समाज और साहित्य में हिजड़ों की समस्या एक सामाजिक समस्या के रूप में उभर कर सामने आ रहा है। वे अपने हक मांग रहे हैं।राजनीति और चुनाव में भाग लेने का अधिकार उन्हें मिल रहा है।समाज में जीते हुए उन्हें बहुत सारी यातनाएँ झेलनी पड़ती हैं।

हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श की शुरुआत सन् 2002 में लिखित नीरजा माधव के उपन्यास 'यमदीप' से माना जा सकता है। इस उपेक्षित वर्ग के कई अनछुए पहलुओं का मार्मिक चित्रण इसमें किया गया है। इसमें मानवी और आनंद कुमार के माध्यम से किन्नरों से संबंधित ऐतिहासिक संदर्भों को रेखांकित करने के साथ-साथ उनकी समस्याओं एवं मानसिक यातनाओं को उजागर किये गये हैं। लेखिका की मान्यता है कि किन्नरों की अवहेलना करने के बजाय उन्हें रोजगार उपलब्ध कराया जाए तो वे अपनी पारंपरिक भूमिका से बाहर आ सकेंगे और स्वतंत्र रूप से इज्ज़त से अपनी जीविका चलाएँगे। 'यमदीप' में हमारे सभ्य समाज के खोखलेपन के प्रति करारा व्यंग्य भी मिलते हैं।

चित्रा मुद्गल के उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा 'का प्रकाशन 2006 में हुआ था इसमें एक माँ अपनी संतान को किन्नरों से दूर रखने की कोशिश करती दिखाई देती है और मजबूरी में विनोद को बिन्नी बनना पड़ता है। वह अपनी माँ के सपने को साकार बनाने की कोशिश करती दिखाई देती है और मजबूरी में विनोद को बिन्नी बनना पड़ता है और अधूरेपन तथा कशमकश के बावजूद यह संकल्प लेता है कि जिंदगी में वह कुछ बनेगा

और अपनी बिरादरी के लोगों को समाज में इज्जत दिलाने का प्रयास करेगा। यह उपन्यास पत्र शैली में लिखा गया है।

डॉ.अनसूया त्यागी के 'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास का प्रकाशन 2007 में हुआ था। इस उपन्यास की लेखिका स्वयं स्त्री रोग एवं प्रसूति विशेषज्ञ हैं। उन्होंने ऐसी दो बहनों की कहानी लिखी है जिन्हें स्वयं या उनके परिवार के लंबे समय तक उनके तृतीय लिंगी होने का आभास तक नहीं होता। पता चलने पर दोनों का ऑपरेशन कर उन्हें स्त्री रू प दिया जाता है। बड़ी बेटी तो पूर्णतः स्त्री बन जाती है और आगे चलकर संतान को भी जन्म देती है।लेकिन छोटी बेटी के भीतर अंग अनुपस्थित होने के कारण वह संतान उत्पन्न नहीं कर सकती। लेकिन सुखी दांपत्य जीवन जी पाती है। लेखिका ने यहाँ शरीर विज्ञान और चिकित्सा संबंधी विवरण शामिल किए हैं। वहीं तृतीय लिंगी व्यक्ति की मानसिकता का भी खुलासा किया है।

सन 2012 में प्रदीप सौरभ का उपन्यास 'तीसरी ताली'प्रकाशन में आया जिसमें समाज के प्रति अलगाववादी दृष्टिकोण का विस्तृत वर्णन मिलता है।इसे एक साहसी उपन्यास कहा जा सकता है। इसमें गौतम अपने बेटे विनीत को कुछ दिनों तक लोगों की दृष्टि से बचाता है।लेकिन अंततः सामाजिक अवहेलना के कारण उस बच्चे को त्यागना पड़ता है। इस उपन्यास को पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह एक तरह का कोलाज है- समसामयिक कथा सूत्रों का, पुराणिक मिथकों का रेखाचित्र, अखबारों की सुर्खियों का, फीचर रिपोर्टिंग का,खोजी पत्रकारिता का, चित्रकला का। प्रस्तुत उपन्यास के माध्यम से लेखक हमें यह सोचने पर बाध्य करते हैं कि तृतीय लिंगी लोगों को इस समाज में किस नजरिए से देखा जाना चाहिए।

सन 2014 निर्मला भुराड़िया का उपन्यास 'गुलाम मंडी' प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलामी का दंश, जिस्म फरोशी, मानव तस्करी और उनका नरकीय संसार का चित्रण,भीख मांगना, दो किन्नर गुंडों में संघर्ष, किन्नर को देह व्यापार में धकेलने की वेदना, सांस्कृतिक परंपरा, आराधना रहन-सहन आदि का मार्मिक वर्णन मिलता है।

महेंद्र भीष्म द्वारा रचित 'मैं पायल' उपन्यास का प्रकाशन 2016 में हुआ था। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। इसमें किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन संघर्ष की कहानी मार्मिक रूप से प्रस्तुत किया गया है। किन्नर के जीवन के आरंभ से लेकर अंत तक की कहानी महेंद्र भीष्म ने प्रस्तुत किया है। किन्नर गुरु पायल सिंह ने अपने जीवन संघर्षों से लडकर नया व्यक्तित्व समूह में बना दिया है।

भगवन्त अनमोल का उपन्यास 'जिंदगी 50-50' किन्नर विमर्श की दृष्टि से अनमोल है। इसका प्रकाशन 2016 में हुआ था। उपन्यास के नायक अनमोल के भाई हर्षा को किन्नर होने का दंश झेलना पड़ता है। अनमोल अपने पुत्र सूर्या का उस दंश से,उस पीड़ा से दूर रखने का संकल्प लेता है। उपन्यासकार ने दर्शाया है कि किसी भी व्यक्तिकी जिंदगी पूर्ण नहीं होती। सबकी जिंदगी फिफ्टि - फिफ्टी होती है, तो फिर किन्नरों को हेय दृष्टि से क्यों देखा जाता है। उन्हें भी एक सामान्य व्यक्तिकी तरह जीवन जीने का अधिकार देना चाहिए।

उपर्युक्त उपन्यासों में किन्नर जनजीवन में व्याप्त शोषण, उपेक्षा,तिरस्कार, घृणा,संघर्ष, जिजीविषा को पूरे सामर्थ्य के साथ प्रस्तुत किया गया है। उक्तसाहित्यकारों ने मुंबई और दिल्ली महानगरों की किन्नर गंदी बस्तियों में नरकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त किन्नर लोगों की संवेदना और आकांक्षाओं का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। जिस तरह किन्नरों में स्वयं को पुरुष या स्त्री का वेश धारण करने की परंपरा विद्यमान है। इनमें जननेंद्रिय दोष होने के बावजूद विवाह की परंपरा और पति- पत्नी के रूप में जीवन यापन की स्थितियों का चित्रण,किन्नर समाज के समाज शास्त्रीय स्वरूप को पहचानने में सहायक होता है।किन्नरों के यौन शोषण के प्रसंग किन्नर उपन्यासों में बहुतायत से पाये जाते हैं।

असिस्टेंट प्रोफसर, हिंदी विभाग
महात्मागांधी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम

वृद्ध विमर्श के आइने में 'रेहन पर रग्घू'

डॉ. माजिदा.एम

शोधसार : भारतीय संस्कृति में बुजुर्गों को उच्च एवं आदर्श स्थान प्राप्त था। वृद्धावस्था को जीवन के अनुभवों का ख़ज़ाना मानकर उनका सम्मान किया जाता था। लेकिन बदलते दौर में नई पीढ़ी के लोग ऊँचे ओहदे पाने की लालसा में अपने माता पिता को उपेक्षा की दृष्टि से देखता है। उनके पास माता पिता की देखभाल के लिए समय नहीं रह गया है। उन्हें घर में अकेलेपन का भी सामना करना पड़ता है । वृद्ध समस्या के इन सभी पहलुओं पर प्रकाश डालने वाला उपन्यास है काशीनाथ सिंह का 'रेहन पर रग्घू'। रग्घू मास्टर के बच्चे नाते रिश्ते से बढ़कर पैसों को महत्व देने लगा तो उन्हें अकेले अपने जीवन की समस्याओं से जूझना पड़ा। अकेलापन, तिरस्कार, शारीरिक समस्याएँ, मृत्यु भय आदि से पीड़ित रग्घू मास्टर का चित्रण अत्यंत हृदय ग्राही है।

बीज शब्द - भूमंडलीकरण, परिवार सदस्यों द्वारा उपेक्षा, अकेलापन, शारीरिक समस्याएँ, मृत्यु भय

भारतीय संस्कृति के परंपरागत मूल्य वृद्धजनों के पक्षपाती है।उनका स्थान हमेशा ही सम्मानित रहा है। वे युवा पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। सयुंक्त परिवार में तो बुजुर्गों की अहमियत और भी ज़्यादा है। अच्छे संस्कार और आचरण हमें परिवार के बुजुर्ग सदस्यों से बढकर और कोई नहीं दे सकता। परिवार के सभी निर्णयों का नियंत्रण उनके हाथों में था और नयी पीढ़ी उनके उपदेशों को शिरोधार्य कर लेते थे। हमारे लिए बुज़ुर्ग धरोहर है और उन्हें सुरक्षा देना हमारा परम् कर्तव्य और नैतिक ज़िम्मेदारी है। मनुस्मृति में बताया गया है कि प्रतिदिन बुजुर्गों को प्रणाम करने और उनकी सेवा करने वाले व्यक्तिकी आयु, विद्या, कीर्ति और शक्तिकी वृद्धि होती है।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्धर्मो यशो बनम्।।[1]

भूमंडलीकरण का प्रभाव भारतीय अर्थ व्यवस्था पर ही नहीं संपूर्ण भारतीय समाज पर पड़ा है। इसके परिवारिक प्रभाव का सबसे ज़्यादा मार वृद्धजनों पर पड़ा है। तरक्की पसंद आधुनिक मानव गाँव से शहर और शहर से विदेशों में जा बसने में ही अपने जीवन की सफलता समझती है। इसी होड में वे अपने माता पिता को भूल जाते हैं। जिन वृद्धजनों को पहले सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था उनकी देखभाल के लिए नई पीढ़ी के पास समय नहीं रह गया है। डॉ.पवित्र कुमार शर्मा ने कहा है "वृद्ध लोग शारीरिक रूप से अशांत या कमज़ोर होते हैं। इसलिए उनकी यह आशा रहती है कि घर के लोग उनकी देखभाल तथा सेवा-शुश्रूषा किया करें। लेकिन जब वृद्ध पाते हैं कि घर में उसकी खैरियत के बारे में भी कोई नहीं पूछता तो उनको बड़ा दुख होता है।"[2]

समकालीन हिन्दी उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में वृद्ध समस्या के विभिन्न पहलुओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसी श्रेणी का एक सफल उपन्यास है काशीनाथ सिंह का 2008 में प्रकाशित रेहन पर रग्घू। 2011 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित इस उपन्यास में वृद्ध जीवन में आ रही उपेक्षा से उत्पन्न वेदना एवं पीड़ा का सजीव चित्र अंकित किया गया है । प्रो. रघुनाथ ने अपना पूरा जीवन बच्चों की परवरिश के लिए व्यतीत किया था। लेकिन जब उनके बच्चे बड़े हो जाते हैं तो वे अपने माता पिता को उपेक्षा की दृष्टि से देखने लगता है और उन्हें अपने बुढ़ापे और अकेलेपन से लड़ने के लिए असहाय छोड़ देते हैं। परिवार के सदस्यों द्वारा उपेक्षा, अकेलापन, तिरस्कार, घर से निकाले जाने का भय, शारीरिक समस्याएँ, मृत्यु भय आदि वृद्ध समस्या के गंभीर पहलुओं का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में मिलता है।

परिवार के सदस्यों द्वारा उपेक्षा :आज भारतीय समाज में वृद्धों को उपेक्षा की दृष्टि से देखने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। बच्चे अपने अभिभावकों को छोड़कर भौतिक चकाचौंध के पीछे भाग रहे हैं। नाते रिश्ते से बढ़कर वे पैसों को अहमियत देते हैं। परिणामस्वरूप माता पिता के प्रति उपेक्षा और संवेदनहीनता का भाव दिन व दिन बढ़ता जा रहा है। जिस उम्र में उसे अपनों के सहारे की ज़रूरत है उसी समय वे नितांत अकेले रह जाते हैं। असुरक्षा की भावना उनके अंतर्मन में इस कदर व्याप्त है कि उन्हें अपना जीवन व्यर्थ सा लगने लगता है। रघुनाथ की पत्नी शीला के शब्दों में

हम इस दुख की गहराई का अनुभव कर सकते हैं- "सारे दुख इसी बुढ़ापे में देखने थे क्या? एक बेटा परदेश में, पता नहीं कब आएगा ; दूसरा यहाँ लेकिन उसका भी वही हाल। बल्कि उससे भी ख़राब ! और इधर बाप की अलग मुसीबत गाँव छोड़ें तो जान बचे, नहीं तो मारे जाएँ। न कोई देखने वाला, न सुनने वाला !"[3] इस प्रकार भौतिक सुखों की अंधी दौड़ में अपने वृद्ध माता पिता को असहाय छोड़ देनेवाले युवा पीढ़ी का चित्रण 'रेहन पर रग्घू' उपन्यास में मिलता है ।

अकेलापन : बुजुर्गों की एक अहम समस्या है तनहाई। वृद्धावस्था में परिवार के सहारे की सख्त जंरूरत है। सहारा न मिलने के कारण उनकी स्थिती अत्यंत दयनीय हो जाती है। रघुनाथ ने अपने बेटों को प्यार से पाल पोसकर बड़ा किया था। उनके बेटे संजय और धनंजय अपनी खुशियों की खातिर माँ बाप का प्रेम भूल जाते हैं। रघुनाथजी को अकेले अपने जीवन की समस्याओं से जूझना पड़ता है। उपन्यास में लेखक ने रघुनाथ का ही नहीं पूरे अशोक विहार का चित्रण इसी प्रकार अकेले पड़े आदमियों की कालोनी के रूप में किया है- "जब कालोनी तैयार हुई तो पाया गया कि यह बूढ़ों की कालोनी है। ऐसे बूढ़े बूढ़ियों की जिनके बेटे बेटी अपनी बीवी और बच्चों के साथ परदेस में नौकरी कर रहे हैं - कोई कलकत्ता है, तो कोई दिल्ली, कोई मुंबई तो कोई बैंगलौर और कइयों के तो विदेश में।"[4]

शारीरिक समस्याएँ : वृद्धावस्था में व्यक्ति की शारीरिक क्षमताएँ क्षीण होने लगती है और वह निष्क्रियता,एवं शिथिलता का शिकार हो जाता है। शारीरिक बदलाव के परिणाम स्वरूप मानसिक तनाव भी उत्पन्न होता है। अपनी इच्छानुसार शरीर साथ नहीं देता है तो उनके मन में निराशा उत्पन्न होती है। वृद्धावस्था में शारीरिक क्षमता के अभाव में उत्पन्न कुंठा, निराशा एवं अजनबीपन का एहसास रघुनाथजी की टूटी साँसों के साथ बताए गए इन शब्दों में स्पष्ट परिलक्षित होता है- "मन तो कर रहा है, शरीर ही साथ नहीं दे रहा है।"[5]

मृत्यु भय : वृद्धावस्था में प्रवेश करने पर व्यक्ति मृत्यु भय से ग्रसित हो जाता है और उसमें आत्मविश्वास का अभाव दिखाई देने लगता है। इस समय उन्हें पारिवारिक सदस्यों की सहानुभूति की ज़रूरत है। इसके अभाव में वे और भी टूट जाते हैं। रघुनाथ के मन में उत्पन्न मृत्यु भय का चित्रण लेखक ने इस प्रकार किया है- "आज जब मृत्यु बिल्ली की तरह दबे पाँव कमरे में आ रही है तो बाहर जिंदगी बुलाती हुई सुनाई पड़ रही है।"[6] मृत्यु का विचार आ जाने पर उनके मन में इस धरती से और भी लगाव उत्पन्न हो जाता है- "इधर एक अर्से से रघुनाथ को लग रहा था कि वह दिन दूर नहीं जब वे नहीं रहेंगे और यह धरती रह जाएगी ! वे चले जाएँगे और इस धरती का वैभव, इसका ऐश्वर्य, इसका सौन्दर्य- ये बादल ये धूप,ये पेड़ पौधे, ये फसलें, ये नदी नाले, कछार, जंगल पहाड़ और यह सारा कुछ यहीं छूट जाएगा !"[7] इस प्रकार मानव के मन में उत्पन्न मृत्यु भय के सभी पहलुओं का चित्रण उपन्यास में सजीवता से चित्रित किया गया है।

निष्कर्ष

भारत के परंपरागत मूल्य वृद्ध जनों के पक्षपाती थे तो भी बदलते दौर में बुजुर्गों को वह सम्मान नहीं मिल रहा है। बदलते सामाजिक मूल्य, नई पीढ़ी की सोच में आए परिवर्तन, बड़े बूढ़ों का अनादर आदि वृद्ध जीवन से संबंधित गंभीर समस्याओं का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में हुआ है। यह कथन ठीक ही है कि "यह कथा विस्थापन एवं मरती हुई संवेदना की करुण कथा कहती है और साथ ही समाज के हर एक वृद्ध की भी जो अपनों के ही रेहन पर पलने के लिए मजबूर है।"[8] युवाओं को एक बात बड़ी गहराई से समझ लेना चाहिए कि आज वृद्ध लोग जिस जगह पर खड़े हैं कल उन्हें भी उसी स्थान पर खडा रहना होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. मनुस्मृति 2/21 सिध्दि नाथानंद स्वामी (व्याख्या) श्री रामकृष्ण मठ 2018 पृ. सं. 61
2. डॉ पवित्र कुमार शर्मा, वृद्धावस्था को सुख से गुजरे, सूर्योदय प्रकाशन 2009 पृ. सं.7
3. काशीनाथ सिंह - रेहन पर रग्घू ,राजकमल प्रकाशन, 2022, पृ. सं.90
4. वही पृ. सं.104
5. वही पृ. सं.56
6. वही पृ. सं.156
7. वही पृ. सं.155
8. https://vishwahindijan.blogspot.com/2017/02/blog-post_54.html

हिंदी, विभाग, सरकारी महिला महाविद्यालय , तिरु वनंतपुरम

'कचनार' उपन्यास एक परिचयात्मक दृष्टि

डॉ. षीबा शरत.एस

हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास सम्राट डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा जी के सन् 1948 में लिखित एक ऐतिहासिक उपन्यास है कचनार । इसमें इतिहास और परंपरा का मिश्रण है। इसकी पृष्ठभूमि में प्रदृष्ट ऐतिहासिक और घटनाएँ सत्य हैं। इस उपन्यास के बारे में वर्मा जी ने यों कहा - "मैंने कचनार के लिखने में अपने अभ्यास के अनुसार इतिहास और परंपरा दोनों का उपयोग किया है। यह वर्माजी की अमरकंटक यात्रा का प्रतिबिंब और उस आशा का प्रतीक है। इस उपन्यास के दूसरे पहलू में उन्होंने इतिहास के साथ-साथ एंथ्रपॉलोजी (Anthropology, नरशास्त्र) को भी उचित स्थान दिया है। इस विषय में उन्होंने झाँसी के नामी रेलवे सर्जन डॉ.एन.के.बखरू से मनुष्यों की स्मरण शक्ति के बारे में खूब विचार विमर्श करके इसमें अपना निजी समर्थन किया है।

इसकी कथावस्तु इस प्रकार हैं- एलविन की फोक सौंग्स ऑफ दि मेखला रेंज (Folk Songs of the Meghala Range) और नागपुर से सरकार द्वारा प्रकाशित 'दि राजगोंड्स'(The Rajgonds) में लिखा था धामोनी राजगोंडों का राज्य था। धामोनी रियासत के राव दलीपसिंह की पत्नी कलावती के साथ उनकी दो दासियाँ ललिता और कचनार को दहेज में महल में लाए गए। दहेज में लड़कियों को देना राजगोंडों की एक प्रथा थी। यह रीति जोधपुर और जयपुर में है। लेकिन यह बुन्देल वंशजों में नहीं है। रावराजा दलीपसिंह के भाई मानसिंह का कहना है कि उनके वंशज बुन्देलों से बड़ा होने के नाते दहेज में मिली लड़कियों से रानियों जैसा बर्ताव करती है। उनकी संतानों को औरस न होने के कारण राज्य का उत्तराधिकारी भी बनाता है। लेकिन दासियाँ जाति में राजगोंड़ों से निचले स्तर के होने के कारण इनके साथ भांवर नहीं पढ़ाया जाता। इसलिए राजा दहेज में मिले लड़कियों को रखैल के रूप में रखते थे। उस समय अहीरों के यहाँ भी ब्याह करके अनेक स्त्रियों को रखने की व्यवस्था थी। लेकिन यहाँ राजा दलीपसिंह की पत्नी कलावती को राजा से अधिक प्यार उनके भाई मानसिंह पर हो गया। रानी ने राजा से अधिक दूर रहने की कोशिश भी की। राजा ने अपनी दबी हुई वासनाओं को कचनार में साक्षात्कार करना चाहा, लेकिन राजा मानसिंह को मन में चाहते हुए भी कचनार रखैल के रूप में जीवन बिताना नहीं चाहती है। इसी तरह राजगोंड़ों में शादी के बाद और एक प्रथा चलती थी। शादी करके ससुराल आए लड़कियों के नाम बदलना। इसके अनुसार राजा दलीपसिंह ने दुलहिन का नाम कलावती रखा। पहले उसका नाम क्या था वर्माजी ने इसका उल्लेख नहीं किया है।

युद्ध में सागर सेना से विजय प्राप्त करके धामोनी की ओर लौटे राजा अचानक घोड़े से गिरते हैं। वे अचेत हो जाते हैं। अनेक उपचार करने पर भी वे बेहोश ही रहे। ऐसे मौके पर मानसिह ने उनके वध करने के उद्देश्य से उन्हें विष पिलाया। राजा को मरा समझकर भयंकर वर्षा और तूफ़ानी रात में उनके शरीर को उठाकर चिता में रखे। वर्षा से बचने के लिए मानसिंह ने अपने साथियों सहित एक पेड़ के नीचे बैठे। उस समय वहाँ पर अकस्मात् पहुँचे महंत अचलपुरी ने राजा को सचेत देखकर उसे बचाकर गुसाइयों के साथ ले चले। जब वर्षा कुछ शांत हो गई तब मानसिंह ने देखा कि शव वहाँ नहीं है। तब उसने ऐसा अनुमान किया कि शायद भयंकर प्रलय ने शव को ले लिया होगा। इस घटना के उपरान्त मानसिंह ने दरबार लौटकर स्वयं राज्य का उत्तराधिकारी घोषित कर महारानी कलावती से शादी करके राजभार सँभाला।

विधवाओं के पुनर्विवाह करने की प्रथा गोडों में है। लेकिन सन् 1734 के आसपास आते-आते यह प्रथा बंद हो गई। राजगोड़ों में विधवा विवाह की प्रथा नहीं है। फिर भी मानसिंह ने कलावती से विवाह किया। उसका कहना है कि बहुत दिनों से राजगोड़ों में बंद हुए इस प्रथा को वह पुनर्जीवित करना चाहता है।

दलीपसिंह के चले जाने पर कचनार ने संन्यास जीवन बिताना शुरू किया। जब मानसिंह की नशीली आँखें उस पर पड़ीं तो वह राज्य छोडकर गोसाई के आश्रम में

आई। कचनार ने अपनी सतीत्व की रक्षा के लिए जिस गोसाई के आश्रम में आई थी वहाँ राजा दलीपसिंह अपनी सुध-बुध खोकर सुमंतपुरी बनकर रहे थे। महंत ने कचनार का भी नाम बदलकर उसे कंचनपुरी रखा। कंचनपुरी ने सुमंतपुरी में राजा का सादृश्य देखा, लेकिन उनके बच्चों जैसा व्यवहार और मरते अनुमान की ख़बर ने उसके मन में राजा का होना न स्वीकार किया।

गोसाई अचलपुरी इस निश्चय में हैं कि धामोनी का अधिकारी दलीपसिंह हैं तथा उन्हें अवश्य धामोनी का राज्य पुनः मिलना चाहिए। इसलिए उसने किसी भी आधार पर सुमंतपुरी की पूर्वस्मृति को जागृत कराने में अतीव तत्पर रहते हैं। गोसाई संगठित रूप से धामोनी पर आक्रमण करते हैं और महन्त अचलपुरी युद्ध में सुमंतपुरी को भी साथ लेते हैं। अब धीरे -धीरे सुमंतपुरी का बच्चों जैसा व्यवहार कुछ बदलता है। एक बार अचानक युद्ध से लगे भीषण चोट के कारण उनकी पूर्वस्मृति वापस आती हैं। दलीपसिंह की पूर्व कहानी महंत से जानने पर कचनार खुश हो जाती है। अपना धामोनी राज्य मानसिंह के हाथों से लेते वक्त राजा दलीपसिंह ने उदार होकर मानसिंह एवं कलावती को माफ करते हैं। वे पुनः धामोनी की गद्दी पर बैठ जाते हैं और कचनार उनकी महारानी बन जाती है।

इस कथानक का मूलाधार विवादास्पद है। क्योंकि एक भीषण चोट लगने के कारण राजा दलीपसिंह की पूर्वस्मृति नष्ट होना तथा पुनः चोट लगने पर स्मृति वापस आना। दूसरा अथवा चोट के प्रभाव से लुप्त हुए पूर्वस्मृतिवाले मनुष्य को चेत आने पर बच्चों जैसा व्यवहार करना और नए सिरे से मस्तिष्क का विकास होना। इसके बारे में वर्माजी ने अपने परिचय पृष्ठ में यों लिखा है -एक पक्ष के डॉक्टरों का मत था कि ज़हर से मनुष्य की स्मरण शक्ति नष्ट नहीं की जा सकती, नष्ट हो भी जाए तो वह फिर लौटकर नहीं आ सकती, और त्रिशंकु बनकर वह टंगी तो रह ही नहीं सकती। इसके संबन्ध में वर्माजी से बखरू ने बताया कि वह विषय विवादस्पद ही रहेगा।

इसके कथानक, घटनाएँ पात्र सब सत्य हैं। इसमें वर्णित धामोनी और सागर तथा राजगोंड़ा आदि ऐतिहासिक हैं। इसमें तत्कालीन युग की अस्त-व्यस्त राजनैतिक परिस्थिति, सामंती स्वार्थों के जकड़ में पड़े साधारण जनता की घुटन सब आते हैं। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में - "इस उपन्यास की सभी घटनाएँ सच्ची हैं, किन्तु विभिन्न कालों और विभिन्न स्थानों पर घटी हैं। राजगोंड़ों की वीरता, सरलता, रसमय जीवन ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य है। लेखक ने कचनार में अपने अभ्यास के अनुसार इतिहास और परंपरा दोनों का उपयोग किया है। वर्माजी ने सन् 1805 में भारत में स्थित गवर्नर जनरल के नोट्स आन दि ट्रैन्सेक्शन दि मराठा इंपायर (Notes on the Transaction of the Maratha Empire) एलबिन की फोकसौग्स आन दि मेखल रेज (Folk Songs of the Mughal Rez) नागपुर के सरकार द्वारा प्रकाशित दि राजगोंड़स (The Rajgonds) तथा यदुनाथ सरकार की फाल आन दि मुगल इंपायर (Fallon the Mughal Empire) नामक पुस्तकों में यह अवश्य सिद्ध किया गया था कि धामोनी गोंड़ों राजगोंड़ों का राज्य था। गोसाइयों के पराक्रम, अखाड़ा आदि भी ऐतिहासिक सच हैं। महन्त अचलपुरी भी सत्य हैं। कलावती, मानसिंह तथा दलीपसिंह और कचनार का संबन्ध भी कल्पित हैं। डॉ. चन्द्रकान्ता गर्जे के शब्दों में गोसाइयों, मराठों और पिंड़ारियाँ ऐतिहासिक सत्य हैं। इस उपन्यास का केन्द्र पात्र कचनार आदर्श पात्र हैं और उनका चित्रण भी नितांत सफल हैं। कचनार में वर्माजी ने ऐतिहासिकता को प्रमुखता देकर काल्पनिक तत्वों के साथ-साथ पात्रों के चारित्रिक विश्लेषण करके मुख्यतः राजा दलीपसिंह के द्वैत चारित्रिक विश्लेषण करके कथा को अच्छी परिणति देने में विजय प्राप्त की है। चारित्रिक विश्लेषण में नरशास्त्र का विज्ञान उन्हें आवश्यक सहायता देते थे। ऐसे अनेक ऐतिहासिक सत्यों एवं पहलुओं के आधार पर इन्होंने इस ऐतिहासिक उपन्यास को अत्यन्त रोमांचकारी बनाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कचनार वृन्दावनलाल वर्मा,पृ.सं.5
2. कचनार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ.सं. 3
3. वृन्दावनलाल वर्मा डॉ. रामदरश मिश्र, पृ.सं. 110

प्रोफसर, हिन्दी विभाग
यूनिवेर्सिटि कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम, केरल।

पद्मा शर्मा के उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में राजनैतिक परिदृश्य

कृष्ण कुमार थापक

शोध-सार : ख्याति प्राप्त कथाकार व कवयित्री पद्मा शर्मा साहित्य जगत का एक जाना पहचाना नाम हैं। जिन्होंने अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में बदलते राजनीतिक परिदृश्य में लोकतंत्र के पहरेदारों के असली चरित्र का पर्दाफाश कर सत्तालोलुप वर्ग के हिंसक चेहरों को भी बेनकाब करता है। लोकतंत्र के पहरुए इलेक्शन के भीतरी तंत्र, भ्रष्टाचार और दबंगों द्वारा वोटों की दौलत लूटे जाने के वर्चस्ववादी मंसूबों को स्पष्ट करता है। राजनीति में स्वार्थनिष्ठा बढ़ जाने से समाज सेवा की भावना का ह्रास हुआ है और वोटर्स को लुभाने के लिए कई तरह के प्रयास किए जाते हैं यहाँ तक की राजनीति में जो आरक्षण की प्रक्रिया अपनाई जाती है उस पर भी एक प्रश्न चिह्न खड़ा कर दिया है। जब आरक्षण के तहत महिला आरक्षण होने पर किस तरह से सरकारी योजनाओं का ढाँचा देकर स्त्री का शोषण किया जाता है। यह सब उनके उपन्यास में वर्णित किया गया है और साथ में यह बताया गया है कि एक तीसरी आँख लोकतंत्र पर पहरा बना कर बीच-बीच में अपनी वक्रदृष्टि व वक्तव्य देती हैं। उनके उपन्यास में सरकारी महकमे की भूमिका को भी बताया गया है कि किस तरह से वह कई परेशानियों का सामना करते हुए लोकतंत्र के प्रत्याशियों का चुनाव संपन्न कराते हैं तथा जो लोग यह सोचते हैं कि स्त्रियाँ राजनीतिक उपन्यास पर लेखन नहीं कर सकती उनके लिए पद्मा शर्मा का उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए एक अद्वितीय मिसाल है।

बीज शब्दः पद्मा शर्मा, राजनैतिक परिदृश्य, प्रलोभन, भ्रष्टाचार, अपराधीकरण, षड्यंत्र, शोषण, बाहुबली, डमी उम्मीदवार, प्रशासनिक अधिकारी, हथकंडे।

मूल आलेख : भारत में लोकतंत्र का जो घिनौना मुखौटा सामने आया हैं, प्रत्येक व्यक्तिइसे पेशे के रूप में अपनाना चाहता हैं, सारे चांडाल दिमाग इसमें प्रवेश करना चाहते हैं। पद्मा शर्मा के उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में इसका कच्चा चिट्ठा पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है।

पद्मा शर्मा ने दबंग एवं भ्रष्ट राजनेताओं द्वारा किस प्रकार से आदिवासियों का शोषण, उत्पीड़न व दमन करने की घटना का सम्यक चित्रांकन अपने उपन्यास में किया है। जिसमें बताया गया है कि जब मालिकों द्वारा कलेक्ट्रेट दर से कम मजदूरी आदिवासियों को दी जाती हैं तो आदिवासियों का मुखिया फगुनिया पूरी मजदूरी की माँग विनय पांडे के सहयोग से उठाता हैं। इससे बड़े किसान क्रोधित होकर विनय पांडे पर हमला और फगुनिया के पुत्र का अपरहण कर लेते हैं तथा धमकी देते हैं कि सभी टोले के लोग गाँव छोड़कर अन्यत्र चले जाएँ अन्यथा उनके साथ भी यही घटना घटित होगी। इस भय से टोले के सभी लोग जाने की योजना बनाते हैं इस बात का फायदा पंडित सुदर्शन तिवारी उठाना चाहता हैं क्योंकि पंडित जी की टायर से तेल निकालने की फैक्ट्री थी जिसमें अधिक दिन तक कार्य करने वाले मजदूर टी वी जैसी भयंकर बीमारी से ग्रस्त हो जाते थे इस वजह से मजदूरों की बहुत जरूरत थी। पंडित जी एक तीर से दो निशान लगाते हुए अपना पासा फेंकते हुए कहते हैं कि 'चंचलपुर में हमाई खेती की जमीन पड़ी हैं और वही पास गाँव में एक फैक्ट्री भी चल रही है। तुम सब लोग वहाँ चले जाओ, जब तक कोई इंतजाम ना हो जाए वहाँ रह सकते हो। तुममें से जिसको खेती करना हो, वह खेती का काम कर लेगा और जिसे फैक्ट्री में नौकरी करना हो वह नौकरी भी कर सकता हैं।'[1]

पंडित सुदर्शन तिवारी का चुनावी तैयारी का काम तो पहले से शुरू हो गया था मतदाता सूची में मतदाताओं के नाम बढ़वाने, कई वर्षों पहले हर त्यौहार पर प्रशासनिक अधिकारियों के साथ-साथ विरोधियों के घर भी मिठाई देना नहीं भूलते थे और विरोधियों के नौकरों को भी वे त्यौहार पर गुलाबी लिफाफा देना नहीं भूलते थे क्योंकि गुलाबी लिफाफा रिश्तों और संबंधों में गुलाबियत बनाए रखता था। पंडित जी में अद्भुत दुरदर्शिता थी 'वे हर तरह के व्यक्तिसे वास्ता रखते थे उन्हें पता था कि राजनीति के प्लेटफार्म पर

हर तरह की गाड़ी हर तरह की सवारी आती हैं..... मालगाड़ी भी गुजरती है और सुपरफास्ट भी....।"[2]

पद्मा शर्मा ने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में राजनीति, पूंजी और बौद्धिक चालाकी का सहज मेल सर्वहारा समाज के समक्ष प्रलोभन का शिकार बनाकर किस प्रकार से उन्हें अपनी तरफ आकर्षित करने का सजीव चित्रांकन बहुत ही संजीदगी के साथ किया हैं। जिसमें बताया गया है कि पहले कट्टर कर्मकांडी जीवन में उँच-नीच छुआछूत विचार करने वाले पंडित सुदर्शन तिवारी अब राजनीति में कदम रख चुके हैं। उनका हृदय परिवर्तन अचानक नहीं हुआ है बल्कि वोटरों को लुभाकर राजनीति सत्ता प्राप्त करने के लिए हुआ हैं तथा उन्होंने राजनीति सत्ता प्राप्त करने के लिए वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार अपने जीवन में लचीलापन भी लाए हैं "अब वे सभी धर्म और जाति के लोगों के साथ उठने बैठने लगे और उनके त्योहारों में भी शामिल होने लगे अखबारों के स्थानीय संवाददाताओं को भी उन्होंने साथ रखा था। खुद का जन्मदिन हो या बेटे का वे इस अवसर पर निचली बस्तियों में जाते और उन्हें कपड़े, अनाज, पढ़ाई का सामान आदि बांटते।"[3]

वर्तमान समय में राजनीति में छल छद्म, साम, दाम, दंड, भेद आदि चलने लगे हैं वह हमें पद्मा शर्मा के उपन्यास 'लोकतंत्र के पहरुए' में दिखाई देते हैं। प्राचीन समय में व्यक्तिराजनीति में इसलिए आता था कि वह समाज की सेवा कर सके लेकिन अब वह स्वार्थ लिप्सा के वशीभूत होकर राजनीति के दंगल में प्रवेश करता है। आज राजनीति इतनी सहज नहीं रह गई है कि व्यक्तिके सरल, सहज एवं स्वच्छ छवि के आधार पर चुनाव में विजयश्री प्राप्त की जाए बल्कि जो भी व्यक्तिछल प्रपंच के साथ राजनीति में प्रवेश करता हैं वही इस में सफल हो पाता है। "लोकतंत्र के पहरुए' के पात्र 'पंडित सुदर्शन तिवारी' कहते हैं कि पहले मंत्र से काम होते थे, फिर तंत्र काम करने लगा। फिर यंत्र प्रचलन में आए और अब षड्यंत्र ने जगह ले ली हैं बिना इसके राजनीति में सफल नहीं हो सकते।"[4]

चुनाव के दौरान राजनीतिक पार्टी व प्रत्याशी आम जनता को लुभाने के लिए लोक-लुभावने वादे करते हैं और नीति-अनीति, साम, दाम, दंड, भेद आदि सभी हथकंडे चुनाव में विजय प्राप्त करने के लिए अपनाते हैं। पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में बताया है कि चुनाव में कई तरह के कार्य किए जाते हैं चुनाव में केवल पर्चे बांटकर व स्वच्छ छवि लेकर जाना पर्याप्त नहीं हैं बल्कि जनता को प्रलोभन देकर, दारू बांट कर, झूठी अफवाह फैलाकर जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना और विरोधियों को अपना व्यक्तिबनाना आदि सभी हथकंडे अपनाकर चुनाव में जीत संभव हैं। पंडित सुदर्शन तिवारी कहते हैं कि "पर्चा चर्चा और खर्चा ही चुनाव का आधार हैं हर दिन के हिसाब से नहीं हर घण्टे के हिसाब से रुपया खर्च होगा इसलिए तो कहा जाता है कि धन, मन और तन से चुनाव लड़ा जाता है।"[5]

पद्मा शर्मा के उपन्यास में डमी उम्मीदवार अर्थात अनुभवहीन प्रत्याशी की भूमिका पर ध्यानाकर्षण करते हुए बताया है कि राजनीति खेल में डमी उम्मीदवारों को प्यादों के रूप में इस्तेमाल चुनाव में हेराफेरी करने के लिए, वोट बांटने, विपक्षी प्रत्याशियों के पक्ष में मतदान को कम करने, शक्ति और धन का उपयोग करने के लिए किया जाता है। "चुनाव के महाभारत में तमाम महारथी अपने हर तरह के दाव लगा रहे हैं और कोशिश कर रहे हैं कि विपक्ष के खेमे में उनका निकट संबंधी ही किसी ना किसी रूप में अपनी पैठ बना ले ऐसा आदमी कभी आजाद उम्मीदवार बनके अपने आका का लाभ करता है तो कभी घोषित तौर पर अपने आका को गाली गुफ्ता करके उनसे दूर होने का नाटक करता है ऐसे विभीषण हो और जयचंदों का चमत्कार इस चुनाव में दिखना शुरू हो गया है।"[6]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में वर्तमान राजनीतिक अपराधीकरण की समस्या की ओर इंगित करते हुए बताया है कि वर्तमान समय में भारतीय राजनीति की डोर अपराधियों के हाथों में चली गई हैं। आज की राजनीति में चुनाव जीतने के लिए कई तरह के हथकंडे अपनाए जाते हैं। सही नेता वही है जिसे गुण्डों का समर्थन प्राप्त हो जब चुनाव आते हैं या किसी को डराने धमकाने की जरूरत होती तो पंडित जी के फरमान पर जगना सेवा में हाजिर हो जाता हैं। पद्मा शर्मा वर्तमान राजनीति की स्थिति को बयाँ करती हुई कहती हैं कि "समय परिवर्तन के साथ राजनीति सीधे-साधे या उसूल वाले लोगों की नहीं रह गई है राजनीति की खुरपी को तो टेढ़े बैंट की आवश्यकता होने

लगी हैं।"[7]

विभिन्न मुहावरों, लोकोक्तियों और उपकथाओं के माध्यम से चुनाव की पैंतरे बाजियाँ पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास में अभिव्यक्तकी हैं। पंडित सुदर्शन तिवारी पिता-पुत्र की कहानी अपने भांजे को सुनाता है और उसे यह ज्ञात कराता है कि चुनाव के समय में किसी का भरोसा नहीं करना चाहिए। कितनी बड़ी बात है कि भरोसा नहीं करना चाहिए तो जनता कैसे प्रत्याशी पर विश्वास कर सकती है सत्य तो यही है कि प्रत्याशी जनता की अपेक्षाओं, आकांक्षाओं और इच्छाओं पर खरा नहीं उतरता है। "राजनीति में किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता हर किसी पर यकीन नहीं कर सकते क्योंकि नमक और चीनी का रंग एक जैसा होता है।"[8]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास में उच्च पदों पर आसीन प्रशासनिक अधिकारी किस तरह से अपने पद की गरिमा खोते जा रहे हैं। इसका एक दिलचस्प प्रसंग है एडीएम 'गायत्री मैडम' को बताता है कि एक समीक्षा बैठक लेने के लिए जिलाधीश कार्यालय माननीय मंत्री जी पहुँचते हैं तो महिला कलेक्टर माननीय मंत्री जी को अपनी कुर्सी पर बैठने का आग्रह करती हैं और मंत्री जी जिलाधीश की कुर्सी पर आसीन हो जाते हैं तथा महिला कलेक्टर बगल की कुर्सी पर आसीन हो जाती हैं लेकिन जब इस स्थिति का यथार्थ विनय पांडे समाचार पत्र में प्रकाशित करता हैं तब खबर से मीडिया में मंत्री जी की खूब निंदा होती है इससे नाराज होकर मंत्री जी कलेक्टर मैडम का स्थानांतरण करवा देते हैं। एडीएम की बात सुनकर 'गायत्री मैडम' मन ही मन विचार करती हैं कि "सब लोगों के अपने-अपने उसूल होते हैं। कुर्सी ही तो पद का प्रतीक होती है, उसपर वही बैठ सकता है जो उसका अधिकारी होता हैं। राजनीति में सच पूछे तो कुर्सी की ही तो लड़ाई है।"[9]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास में चुनाव के समय रहागीरों पर किए जाने वाले जुल्म की ओर ध्यानाकर्षण करते हुए बताया हैं कि निर्वाचन आयोग की आचार संहिता के पालन करने तथा सीमा पर लगाम लगाने के लिए निर्वाचन कार्यालय द्वारा गठित एसएसटी टीम के सदस्यों द्वारा नाकों पर जुल्मी अंग्रेजों की तरह व्यवहार किया जा रहा हैं। वहाँ कभी किसी बारात को, कभी अनाज बेचकर लौट रहे किसान को, कभी गृहस्थों को और कभी व्यापारियों को रोक कर निजी नगद राशि व आभूषणों को जप्त कर परेशान किया जा रहा हैं। इसी समस्या पर पद्मा शर्मा ने लोकतंत्र के पहरुए के माध्यम से सवाल करती हुई कहती हैं कि "चुनाव संहिता लग जाने की वजह से क्या आम आदमी को संविधान द्वारा प्रदत्त गमनामगन की आजादी और संपत्ति रखने के अधिकार को मुल्तवी कर दिया गया है? अगर नहीं तो नाको की कार्यप्रणाली बदली जानी चाहिए या फिर माननीय हाईकोर्ट और शीश अदालतों को ऐसे प्रतिबंधों को खत्म कर देने के लिए स्वतः संज्ञान लेना चाहिए।"[10]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में प्रशासन की भूमिका को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि जनसाधारण यही सोचता है कि केवल चुनाव में खड़े होने वाला प्रत्याशी और कार्यकर्ता कड़ी मेहनत करते हैं बल्कि प्रशासनिक अधिकारी और उसके अमले की भूमिका सबसे अहम होती हैं। जो चुनाव की शुरुआत से लेकर आखिर तक रातों की नींद हराम कर एड़ी चोटी की मेहनत करते हैं और कलेक्टर जैसे प्रशासनिक अधिकारी यही सोचते हैं कि चुनाव किसी तरह से संपन्न हो जाए तथा किसी भी प्रकार से उनकी छवि धूमिल ना हो क्योंकि शांतिपूर्ण संपन्न कराना ही उनका सबसे बड़ा ध्येय होता हैं। "आज निर्वाचन कार्यालय के कहने पर कलेक्टर ने जिला मुख्यालय में संक्षिप्त सूचना पर जिले के प्रमुख अधिकारियों की एक अर्जेंट मीटिंग बुला ली। जिसमें हाजिर होने के लिए किसानों को सिंचाई का पानी देने की योजना बनाने और व्यापारियों के यहां छापा डालकर रेवेन्यू वसूल करने जैसे महत्त्वपूर्ण काम कर रहे अधिकारी अपना काम छोड़कर बैठक में हाजिर हुए।"[11]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए के माध्यम से चुनाव कर्मचारियों की पीड़ा की ओर ध्यानाकर्षण करते हुए बताया हैं कि जब सरकारी अमले की ड्यूटी चुनाव मतदान कराने के लिए दूरदराज बीहड़ इलाके में लगती हैं। तो उसके पास अपनी सुरक्षा का कोई साधन नहीं होता है उसके साथ एक गार्ड या सिपाही को डंडे के साथ भेजे जाता हैं। क्या एक डंडे से चुनाव कर्मचारियों की सुरक्षा की जा सकती है? एक बहुत बड़ा प्रश्न पद्मा शर्मा

ने प्रस्तुत किया है कि चुनाव में विजय प्राप्त करने वाला प्रत्याशी ख़ुशियाँ मनाता हैं लेकिन दूसरी तरफ चुनाव प्रक्रिया में संलग्न सरकारी कर्मचारी को किस तरह से पापड़ बेलना, भय के माहौल में जीना पड़ता है। जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता यह हैं। यह वही व्यक्तिसमझ सकता है जो चुनाव में मतदान कराने जाता है। वह चुनाव आयोग की योजना पर रोष व्यक्त करते हुए कहता हैं कि "हर गाँव में चुनाव केंद्र होना चाहिए पिछले चुनावों की तरह तीन गाँव को मिलाकर चुनाव करा दिए जाते तो इन्हें क्या फर्क पड़ जाता और सिर्फ एक तिहाई कर्मचारी ही यह कष्ट उठाता इन नेताओं और बड़े-बड़े अधिकारियों को ऐसे माहौल में रात गुजार ना पड़े तब इन्हें दाल-रोटी का भाव समझ में आए।"[12]

नगर पालिका परिषद के अध्यक्ष पद की सीट अनुसूचित जनजाति महिला के लिए आरक्षित हो जाती हैं। अब तक इस सीट पर जगना अपनी उम्मीदवारी जता रहा था इससे जगना हतोत्साहित हो जाता हैं लेकिन आरक्षण के बाद उसके राजनैतिक मित्र उसे प्रोत्साहित करते हैं कि अपनी धर्मपत्नी संतो को टिकट दिलवाकर उसे चुनाव मैदान में खड़ा करें क्योंकि पत्नी भले ही अध्यक्ष पद पर आसीन हो जाए। लेकिन उसके अप्रत्यक्ष लाभों का भोग अध्यक्ष पति महोदय ही करेंगे। जगना के मित्र गिरिधर और मनमोहन की निगाह टिकट के बहाने तीखे नाक-नक्श वाली संतो को भोग लेने की हैं। अतएव शारीरिक हवस की पूर्ति कर लेने की भूमिका तैयार करते हुए गिरधारी महिलाओं के शासन की वैभव गाथा का कविता के माध्यम से बखान करता हैं-

"अब महिलाओं का शासन होगा देश में
रसोई और खेतों के अलावा भी
उनके पार्षद पति, अध्यक्ष पति, मेयर और सरपंच पति हैं
लेने हैं उनको ही निर्णय.....
यहाँ तक की हो रहे हैं उनके ही भाषण
पहन रहे हैं फूल माला.... "[13]

पद्मा शर्मा ने अपने उपन्यास में स्त्री की राजनीति में दयनीय स्थिति की ओर पाठकों का ध्यानाकर्षण करते हुए बताया हैं कि राजनीति में सब पुरुष एक ही थाली के चट्टे-बट्टे हैं। जो सभी मिले हुए हैं संतो को पार्टी का टिकट प्राप्त करने के लिए कदम-कदम पर शोषण का शिकार होना पड़ता है। "राजनीति के सुगंधित वृक्ष से विषधर लिपटे रहते हैं जो भी उसकी छांह लेने जाता है - बदले में उसे विष ही मिलता है।"[14]

निष्कर्ष : पद्मा शर्मा ने भारतीय राजनीति के निकृष्ट रूप को निर्भयतापूर्वक अपने उपन्यास लोकतंत्र के पहरुए में उभारा हैं। लोकतंत्र शासन प्रणाली में पूंजीवाद, षड्यंत्र और सामान्य जन का शोषण राजनेताओं का सत्ता के प्रति लोभ आदि पर करारा व्यंग्य किया है। वर्तमान में राजनीतिज्ञों के लिए राजनीति देश सेवा का माध्यम न रहकर उनका पेशा बन गया है। उन्होंने राजनीति के छल छद्म और गिरते हुए स्तर को बताने का प्रयास किया है ताकि आम नागरिक राजनेताओं के लुभाने वादे में नहीं आ सके तथा उनके उपन्यास में जिस तरह से प्रत्याशियों की राजनीति की बखेड़ीया उधेड़ी गई हैं उसका कारण यही है कि आम जनता उनके चेहरों को पढ़ कर उनकी चालों को समझ सके और सही राजनेता का चुनने का प्रयास कर सके। क्योंकि वोटर्स को लुभाया जाना क्षणिक होता है। जिसके दूरगामी परिणाम बहुत खराब होते हैं और दिन प्रतिदिन इन्हीं कारणों से हमारे समाज और राजनीति का वातावरण दूषित होता जा रहा है। राजनीति के रूप में हमें जिन समाज सेवियों को चुनना चाहिए उनका सही रूप से चुनाव नहीं हो पाता है और एक गलत व्यक्तिराजनीति में अपनी भूमिका निभाने लगता है। जिसका परिणाम समस्त जनमानस को भोगना पड़ता है ना केवल वर्तमान में जनता को भोगना पड़ता है बल्कि आगामी पीढ़ी पर भी इसका प्रभाव पड़ता है जिसको मिटाने के लिए कई युग बीत जाएँगे तो भी वह खत्म नहीं

हो पाएगा। राजनीति के प्रति जागरूक करने के लिए पद्मा शर्मा ने बताया यह सब बताया हैं।

सन्दर्भ :

1. पद्मा शर्मा, लोकतंत्र के पहरए, सान्निध्य बुक्स (2022) पृ. सं.- 18
2. आर के सिंह, राजनीति और आदिवासी पृष्ठभूमि पर आधारित उपन्यासों में अग्रगण्य : लोकतंत्र के पहरए (मार्च-अप्रैल 2022) साहित्य क्रांति पृ. सं.- 30
3. पद्मा शर्मा, लोकतंत्र के पहरए, सान्निध्य बुक्स (2022) पृ. सं.- 24
4. विजय कुमार तिवारी, लोकतंत्र के पहरुए की राजनीतिक चेतना (फरवरी 2023) पुरवाई अभिव्यक्तिकी स्वतंत्रता
5. पद्मा शर्मा, लोकतंत्र के पहरए, सान्निध्य बुक्स (2022) पृ. सं.- 47-48
6. वही, पृ. सं.- 87
7. वही, पृ. सं.- 26
8. वही, पृ. सं.- 46
9. वही, पृ. सं.- 35
10. वही, पृ. सं.- 89
11. वही, पृ. सं.- 49-50
12. वही, पृ. सं.- 132
13. प्रमोद भार्गव, लोकतंत्र के पहरुए (अक्टूबर 2022) अक्षरा साहित्य की मासिकी, पृ. सं.- 138
14. विजय कुमार तिवारी, लोकतंत्र के पहरए की राजनीतिक चेतना (फरवरी 2023) पुरवाई अभिव्यक्तिकी स्वतंत्रता।

शोधार्थी, कृष्ण कुमार थापक
रविंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय
भोपाल म.प्र., मोबाइल नं.- 85170-24249
ई-मेल आई डी - krishnathapak1988@gmail.com

शोध निर्देशक, डॉ संगीता पाठक
प्रोफेसर, मानविकी एवं उदार कला संकाय
रविंद्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय, भोपाल म.प्र.

कविता

ममता

आतिरा.जे.एस

जिसे आँखों का तारा कहा था,
आज वही गुम है।
उस ममता के आँगन के सारे
फूल आज गुम है।
किलकारी सुनने की उसकी जो
आदत थी वही है गुमसुम।

लाडला उसका है उससे दूर,
गुमनाम कही।
लाडले की याद दे रही थी जख्म,
उसके आँसू बन अब इतने
जालिम कि भेज बैठी ईश्वर,
को पैगाम

मेरी ममता के आँचल में वह,
सदैव ज़िंदा रहेगा
भले ही गुम है वह आँखों से
पर मेरे लिए हमेशा मेरे साथ रहेगा।

छात्र, हिंदी विभाग
एम. जी. कॉलेज
तिरुवनंतपुरम

नरेंद्र कोहली और अमीश त्रिपाठी के दृष्टिकोण में सीता

नीरजा. टी.के.

शोध सार-मिथक लोगों को उनकी रीति-रिवाज एवं परंपराओं को समझने में मदद करता है।यद्यपि रामायण एक ऐसा महाकाव्य है जो पुनः कथन एवं पुनः व्याख्यान की संशोधनवादी लेखन कार्यों में सबसे लोकप्रिय रहा है, किंतु यह ध्यान देने वाली बात है कि इस महाकाव्य में हर पात्र को उतना महत्व नहीं मिला है जितने कि वे हकदार थे। सीता शायद रामायण की ऐसी नारीवादी केंद्रीय पात्र हैं, जो पति पारायण नारी के लिए एक उचित उदाहरण है। उसे देवी लक्ष्मी का अवतार, दयालु, साहसी एवं सहानुभूति पूर्ण पात्र के रूप में चित्रित किया गया है। इक्कीसवीं सदी के रामायण के पुनः कथन का आधार वही है किंतु नरेंद्र कोहली और अमीश त्रिपाठी ने सीता नामक पौराणिक पात्र को अपने लेखन कार्य में भिन्न रूप से दर्शाया है। इस लेख में उस पर प्रकाश डाला गया है।

बीज शब्द - सीता, रामायण, आधुनिक नारी, आदर्श पत्नी, योद्धा

अयोध्या की रानी एवं राम की पत्नी सीता, देवी लक्ष्मी की अवतार हैं। राजा जनक को हल से खेत जोतते समय सीता मिली और उन्होंने सीता को अपने पुत्री की तरह पाला। बड़ी होने के बाद सीता की स्वयंवर के लिए जनक एक परीक्षा निर्धारित करते हैं कि कोई भी व्यक्तिजो सीता से विवाह करना चाहते हैं उन्हें शिव के धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाने में सक्षम होना पड़ेगा जो एक साधारण व्यक्ति के लिए असंभव था।परंतु रघुनंदन राम इस प्रतियोगिता में विजय प्राप्त कर लेते हैं और सीता से उनका विवाह संपन्न हो जाती हैं।

सीता एक आदर्श पत्नी और महिला का प्रतिनिधित्व करती है। अपने पति के प्रति सीता जी के हृदय में जो निष्ठा थी असीम एवं अपार थी। वनवास के दौरान जंगल में रहते हुए भी उनकी चेहरे की सामग्री एवं चमक कभी कम नहीं हुई। राम के प्रति अपने प्रेम और निष्ठा को साबित करने के लिए उन्हें कई परीक्षाओं से गुज़रना पड़ता है और वह उन सब में उत्तीर्ण हो जाती है। भारतीय नारियों से पवित्रता की अपेक्षा सदियों से रखी गई है तथा सीताजी इसकी सबसे बड़ी सबूत है। रावण के कैद में सीता जिस दर्द से गुज़रती है, उसकी तुलना में राम रावण युद्ध की पश्चात सीता का राम द्वारा वन में छोड़ जाने पर जो उनको पीड़ा जो मिली उससे कम ही है। आज देवी के रूप में पूजा की जाने वाली इस मिथकीय पात्र को भी कभी समाज ने अपवित्र समझकर इन्हें अयोध्या से निर्वासित कर दिया था। इस पौराणिक पात्र को उनकी वीरता एवं विशुद्धता के साथ नरेंद्र कोहली एवं अमीश त्रिपाठी ने अभ्युदय (दीक्षा, अवसर, संघर्ष की ओर, युद्ध-1, युद्ध-2) और सीता मिथिला की यैद्धा में अपने तरीके से उनके राम कथा श्रृंखला में चित्रित किया है।

नरेंद्र कोहली की सीता-अभ्युदय के संदर्भ में

राम कथा के मुख्य पात्र सीता को नरेंद्र कोहली जी ने एक आदर्श नारी के रूप में चित्रित किया है। शिक्षा असर संपत्ति और युद्ध एक और युद्ध दो हमें सीता के चरित्र में शुद्ध मानवीय गुण देखने को मिलता है। सीता का अज्ञानकुलशीला होने का एवं उनके सौंदर्य का उल्लेख इसमें बार-बार होता है। विश्वामित्र कहते हैं कि सीरध्वज ने यह नहीं सोचा था कि जब कन्या युवती होगी तो जाति-पांति, कुल-गोत्र और ऊँच-नीच की मान्यताओं में जकड़े इस समाज में उसके विवाह की समस्या कितनी जटिल होगी; और यह समस्या तब और भी जटिल हो जाएगी तब सीता रूपवती युवती होगी। आज सीता चमत्कारिक रूपवती युवती है, जिसके सौंदर्य की चर्चा सम्राटों के प्रासादों के भी बाहर, आर्यवर्त के बहुत परे तक राक्षसों देवताओं, गंधर्वों, किन्नरों, नागों

आदि के राज महलों में भी हो रही है। पुत्र इससे एक और जहाँ सीता जैसी गुणशीला, रूपवती युवती की जाति-विचार के पिशाचों के हाथों हत्या नहीं होगी और उसका विवाह अपने योग्य वर के साथ होगा (दीक्षा, नरेंद्र कोहली, पृ. सं 157,158,159)।

इस कथा में सीता के हृदय में राम के प्रति जो प्रेम है वह बहुत ही अगाध है। इसी वजह से उन्हें नुकसान होने की आशंका से अपने पति की क्षमताओं को जानते हुए भी लक्ष्मण पर विश्वास करती है। छल कपट से सीता के अपहरण करने के बावजूद रावण ने उन्हें अपना न पाया। सीता के हृदय में राम के लिए जो अनन्य प्रेम है उसके आगे रावण को हारना पड़ता है।

पूरे उपन्यास में सीता को राम की अनुचर के रूप में देख सकता है। अन्याय और भयानक शोषण के बीच रहने वाले वनवासियों को देखकर सीता के हृदय में उनके प्रति सहानुभूति जागती है। एक स्त्री खुद को तब पूर्ण महसूस करती हैं जब वह एक शिशु को जन्म देती है किंतु नरेंद्र कोहली की सीता लोक संगठन, शस्त्र संचालन, प्रशिक्षण, लोक शिक्षा आदि के कारण अपनी माँ बनने की इच्छा को दबाकर जीती है। यहाँ हमें सीता के भीतर एक आधुनिक नारी का रूप नज़र आता है। न्याय, समानता एवं अधिकारों के लिए राम के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ी रहने वाली सीता हमें इस उपन्यास में देखने को मिलता है।

सीता ने खुद को एक वनवासी के रूप में ढ़ल लिया था। ऐसे होते हुए भी राम सीता को शस्त्र संचालन, तैरना और नाव चलाने में निपुण कर देते हैं, राम ने सीता से शस्त्राभ्यास करा दिया था- मुखर को सक्षम बना दिया था;और अब सुमेधा भी दोपहर को सीता के पास आ जाती थी। उसने उद्घोष से थोड़ा-बहुत शस्त्र परिचालन भी सीख लिया था।राम भी अपने परिवेश में दृष्टिपात करने के लिए चले जाया करते थे (अवसर, नरेंद्र कोहली, पृ. सं 156-157)।

इंद्र के पुत्र जयंत से युद्ध करते समय सीता अपने पति से मिली सैन्य प्रशिक्षण से युद्ध कौशल दिखाती है और स्वयं की रक्षा करती है। सीता हरण के समय भी रावण जैसे बलिष्ठ योद्धा पर कुशलता से बाण चलाती है। रावण को सीता को हराने के लिए धनुष की प्रत्यंचा काटना पड़ता है। अशोक वाटिका में बंदी रहने के दौरान भी वह रावण के साथ द्वंद युद्ध करने के लिए तलवार की माँग करती है। सीता एक प्रतिभावान चिकित्सक भी थी। लोप मुद्रा और उनकी बेटी के प्रभाव से सीता ने शल्य चिकित्सा के प्रशिक्षण भी प्राप्त करती है। मैखाने लोगों के उपचार वश सेवा करती है। जब राम और लक्ष्मण अन्य ऋषिगण के साथ जन-जागृति अभियान में व्यस्त हो जाते हैं तब सीता अपनी जी जान लगाकर पिछड़ी जाति के वृद्धों, महिलाओं और बच्चों को अक्षर ज्ञान कराती है, उनको पढ़ाती है। उनके अंदर शिक्षा के प्रति रुचि बढ़ाती है और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति जागरूक कराती हैं।

नरेंद्र कोहली की सीता में हम एक स्त्री में सुलभ देखने वाली कायरता भी देख सकते हैं। उन्होंने सीता को हर मानविक संवेदनाओं से गुज़रती हुई एक साधारण स्त्री के रूप में चित्रित किया है। कई प्रसंगों में हम सीता को अपनी मानसिक संतुलन खोते हुए भी देख सकते हैं।जब राजा जनक सीता को वीर्य शुल्का घोषित करते हैं तब सीता को विवाह से संबद्ध कई सारी चिंताएँ मन में होती हैं। कौन होगा वह व्यक्ति जो शिव धनुष को तोड़ कर उससे विवाह करेगा, इस आशंका की अग्नि परीक्षा से वह कई बार गुज़रती है। राम की ताकत एवं सामर्थ्य के ज्ञान होते हुए भी निरर्थक संदेह के कारण राम के पीछे लक्ष्मण को भी भला-बुरा कह कर भेज देती है। जिसका परिणाम स्वरूप उनकी अपहरण हो जाती है। यहाँ तक कि अपहरण होने के पश्चात् सीता कई बार अपनी साड़ी को गले में बांधकर आत्महत्या करने का प्रयास भी करती है। रावण की चाल समझकर वे हनुमान पर भी तुरंत भरोसा नहीं कर पाती।

अमीश त्रिपाठी की सीता-सीता मिथिला की यैद्धा के संदर्भ में

अमीश त्रिपाठी का उपन्यास सीता मिथिला की योद्धा में सीता एक आदर्श पत्नी, एक बहादुर एवं कुशल योद्धा, और एक प्रभावशाली राजनीतिज्ञ भी है। हिंदुस्तान टाइम्स को दिए एक साक्षात्कार में अमीश जी कहते हैं कि सीता सिर्फ एक आज्ञाकारी और विनम्र पत्नी ही नहीं वह एक योद्धा भी थी। मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि बहुत से लोग यह भी नहीं जानते कि वह राजा जनक की गोद ली गई पुत्री थी। बहुत सारे लोगों के साथ बातचीत करने के बाद मुझे जो अनुभूति हुई है वह यह है कि लोग भले ही रामायण के बारे में जानते हैं, किंतु इन्हें सीता की कहानी के बारे में काफी कम जानकारी है। आगे वह अपने उपन्यास के बारे में कहते हैं कि सीता को एक नारीवादी प्रतीक के रूप में देखने का अवसर पाठकों को मिलेगा और इससे महत्वपूर्ण बात यह है कि उन्हें एक योद्धा के रूप में देखेंगे अर्थात उनकी शारीरिक शक्तिके साथ उनकी मानसिक क्षमता की साक्षी बनेंगे।

सीता मिथिला की योद्धा सीता के दृष्टिकोण से लिखा गया रामायण नहीं है। यह सीता की कहानी है जिसके आखिरी हिस्से में राम एक पात्र के रूप में आते हैं। कहानी की शुरुआत शिशु सीता से होती है जिसकी रक्षा एक गिद्ध कर रही है।मिथिला के राजा और रानी को यह शिशु मिल जाता है और फिर वह सीता को अपनी पुत्री की तरह पालते है। सीता बड़ी हो जाती हैं और एक बहादुर युवा योद्धा बनती है। गुरु विश्वामित्र सीता की प्रतिभा और क्षमता को पहचान लेते हैं और यह निर्णय कर लेते हैं कि वह सीता को विष्णु के पद पर बिठाएंगे। यह पद उन व्यक्त्यिों को दिया जाता है जो लोगों को नए जीवन की राह दिखाते है, जो अच्छाई के प्रचारक और धर्म के संरक्षक हैं। उसी समय राम को भी विश्वामित्र के प्रतिद्वंद्वी गुरु वशिष्ठ द्वारा विष्णु की उपाधि पर बिठाने के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा होता है।

सोलह साल की उम्र में सीता मिथिला की प्रधानमंत्री बन जाती है। जैसे ही वह उस पद में विराजमान होती है, वह अपने देश में सकारात्मक सुधार लाने का प्रयत्न करती है एवं नए कानूनों को लागू करती है। गृह निर्माण शैली और व्यवसाय से लेकर नगर की रक्षा तक सभी काम वह संभालती है। मिथिला को अपनी पुराना प्रौढ़ एवं प्रसिद्धि पुनः प्राप्त होना शुरू हो जाता है। सीता ने नगर के केंद्र में एक व्यवस्थित बाज़ार का प्रबंध कराया। जहाँ एक जैसे, स्थायी खोमचे बनाकर विक्रेताओं को दिए गए, इससे स्वच्छता और अनुशासन मुमकिन हो सका। बिक्री बड़ी छाती चौड़ी और बर्बादी में कमी आई इससे कीमतों के चक्र में बढ़ोतरी होकर व्यवसाय में उन्नति हुई (सीता मिथिला की योद्धा, अमीशत्रिपाठी, पृ. स 129-130)।

सीता को राम और सीता का विवाह कराने का और अपने प्रतिद्वंदी वशिष्ठ पर जीत हासिल करने का विश्वामित्र की योजना के संबंध में पता चलती है किंतु जब वे राम की बहादुरी के किस्से सुनती हैं तब उन्हें विश्वास हो जाती है कि राम उनसे भी अच्छा विष्णु बनेंगे। सीता के हृदय में ईर्ष्या का भाव नहीं पनपता। वह सिर्फ अपने देश और देशवासियों की शांति और भलाई चाहती थी।

इस उपन्यास के कई प्रसंगों में युद्ध कला में सीता की कुशलता को विस्तृत रूप से चित्रित किया गया है। जब रावणसैनिक उस पर हमला करते हैं तो सीता उन्हें ठीक तरह से ना देख पाने के बावजूद अपनी गंभीर श्रवण शक्ति के माध्यम से वह सबको मार गिराती है। यहाँ आंखों का कोई काम नहीं था। उन्हें अपने कानों पर ही भरोसा करना था। ऐसे महान धनुर्धर थे जो आवाज़ सुनकर ही तीर चला सकते थे। लेकिन आवाज़ के अंदाज़े पर चाकू फेंकने वाले बहुत कम थे। सीता और दुर्लभ योद्धाओं में से थी (सीता मिथिला की योद्धा, अमीश त्रिपाठी, पृ. स 4)।

आगे इस उपन्यास में ध्यान देने वाली विशेष बात यह है कि इसमें सीता के बाह्य सौंदर्य का अतिशयोक्तिपूर्ण

वर्णन नहीं किया गया है। जब श्रीराम सीता को पहली बार देखते है तो हर योद्धा के शरीर का आभूषण अर्थात चोट की निशान के सीता के शरीर में वे देखते हैं जो उनको और आकर्षक बनाती है। राम की आंखें फिर से कहीं खो गई थीं। वह सीता की कलाई में पड़े वरद्राक्ष के कंगन को देख रहे थे। सिर्फ ईश्वर या खुद राम ही जान सकते थे कि उनके मन में क्या चल रहा था। शायद जिंदगी में पहली बार सीता को शर्म महसूस हो रही थी। उन्होंने युद्ध के निशान पड़े अपने हाथों को देखा। उनके बाएँ हाथ पर पड़ा युद्ध चिह्न ज्यादा बड़ा था। उनके विचार में उनके हाथ सुंदर नहीं थे (सीता मिथिला की योद्धा, अमीशत्रिपाठी, पृ. स 233)।

रामायण के आधार पर लिखे गये उपन्यास की कथावस्तु लगभग समान है और सदैव राम पर केंद्रित होती है। किंतु अमीश त्रिपाठी ने सीता को एक प्रमुख एवं अनूठी पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है। जब हम इस शृंखला का पहला उपन्यास पढ़ते हैं तभी हमें सीता की पात्र काफी दिलचस्प लगती है। अमीश त्रिपाठी की सीता बहादुर और कुशल है, वह आत्मनिर्भर है, किसी के साथ वह भेदभाव नहीं करती। वह हर मायने में कानून की अनुयायी एवं निष्पक्ष नेत्री है। इन सारे गुणों ने सीता को वास्तविक रूप में एक उत्तम शासक बनाया है।

नरेंद्र कोहली और अमीश त्रिपाठी ने जिस प्रकार सीता को एक नारी के रूप में देखा है उसमें अधिक भिन्नता नहीं है। दोनों लेखकों की सीता एक योद्धा थी किंतु एक को युद्ध कौशल का प्रशिक्षण बचपन से मिली तो एक को अपने पति से विवाह के पश्चात प्राप्त हुआ। नरेंद्र कोहली की सीता एक शल्य चिकित्सक थी तो अमीश त्रिपाठी की सीता विष्णु के पद के लिए चुनी गई एक नेत्री एवं एक देश की प्रधानमंत्री थी। अमीश त्रिपाठी की सीता में शारीरिक शक्तिके साथ-साथ मानसिक स्थिरता का एक दुर्लभ मेल है किंतु नरेंद्र कोहली की सीता रावण के द्वारा अपहरण के पश्चात ऐसी दयनीय स्थिति में पहुँचती है कि वह आत्महत्या करने की प्रयास करती है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. दीक्षा - नरेंद्र कोहली वाणी प्रकाशन 2016
2. अवसर - नरेंद्र कोहली - वाणी प्रकाशन 2021
3. रामकथा - नरेंद्र कोहली - हिंदी पॉकेट बुक्स 2019
4. सीता मिथिला की योद्धा - अमीश त्रिपाठी - वेस्टलाण्ड पब्लिकेषन्स - 2019
5. भारतीय मिथक कोश उषा पुरी - नैशनल पब्लिषिंग हाउस -2004

अन्यसंदर्भ

6. Contemporizing ramayana a study of amishtripathis novels NidhiBoora - Maharshi Day and University 2022 (http://hdl.handle.net/10603/381764)
7. नरेन्द्र कोहली के उपन्यासों में अनुशीलन प्रदीप सी लाद शिवाजी विश्वविद्यालय 2001 (http://hdl.handle.net/10603/144473)
8. The Mahasamar series by NarendraKohli (https://www.indica.today/reviews/mahasamar-narendra-kohli/)

शोध निदेशक : **डॉ. जी. शान्ति**
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
अविनाशिलिंगम इनस्टिट्यूट फॉर
होम सयन्स एण्ड हयर
एजुकेशन फॉर वुमेन (कोयम्बत्तूर)

शोधार्थी , हिन्दी विभाग

निर्मल वर्मा की रचना में प्रवासी जीवन

डॉ. षाजी.एन.

प्रवासी शब्द का अर्थ है कि परदेश में वासी। अर्थात अन्य देश में बसने वाले भारतीय। प्रवासी साहित्य से तात्पर्य है कि अन्य देश में रहनेवाले भारतीयों का साहित्य। प्रवासी साहित्य का संबन्ध प्रवासी लोगों के ज़रिए लिखनेवाले साहित्य से है। "विदेशों में स्थित भारतीय मूल के लोगों द्वारा सृजित साहित्य प्रवासी साहित्य है। इस साहित्य के माध्यम से भारतीयों को वहाँ की पारिस्थिति एवं भारतीयों के प्रति उनके व्यवहार, वहाँ की संस्कृति आदि का पता चलता है।"[1]

प्रवासी साहित्य के अंतर्गत कविताएँ, उपन्यास, कहानियाँ, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खंडकाव्य, अनूदित साहित्य, यात्रा वर्णन, आत्मकथा आदि का सृजन हुआ है।

मुख्य रूप से प्रवासी लोगों के दो श्रेणियाँ हैं। एक तो अशिक्षित एवं अर्धशिक्षित लोग है जिन्होंने अपनी आजिविका के लिए विदेश चल बसे हैं। दूसरे शिक्षित मध्यवर्गीय लोग हैं जिन्होंने अच्छी नौकरी के लिए या बेहत्तर भौतिक जीवन के लिए प्रवास किया है। अधिकांश प्रवासी साहित्य दूसरी श्रेणी का होना सहज और स्वाभाविक है। "प्रवास दो प्रकार का होता है। अंतर्देशीय और अंतर्राष्ट्रीय। प्रवास के मूल में दो कारण माने गए हैं। पहला पुश फैक्टर और दूसरा पुल फैक्टर है। पुश फैक्टर में बेरोजगारी, प्राकृतिक असंतुलन, राजनैतिक संत्रास आदि आते हैं। जबकि पुल फैक्टर में व्यक्ति बेहत्तर रोजगार, बेहत्तर शिक्षा, बेहत्तर सुरक्षा के लिए पलायन करता है।"[2] पूरे विश्व में आज शिक्षित भारतीय फैले हुए हैं। कोई ऐसे जगह नहीं जहाँ उनका अधिकार न हो। सभी देशों में इन प्रवासी भारतीय वहाँ की आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक, शैक्षिक और मीडिया के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

"प्रवासी लेखन की शुरुआत तो देश से विदेश जाने अर्थात विस्थापन की प्रक्रिया के साथ ही जुडी हुई है, किंतु अस्सी के दशक से हिंदी का प्रवासी साहित्य जिस तरह लगातार विकसित होता चला आया है, उससे वह आज के सर्वाधिक चर्चित और लोकप्रिय विमर्श के रूप में जाने लगा है।"[3] प्रवासी साहित्य को कुछ लोग नॉस्टेल्जिया साहित्य की संज्ञा दी है क्यों कि पराए देश में पराए होने की अनुभूति और उस अपरिचित परिवेश में समायोजन के प्रयास, नॉस्टेल्जिया को ही प्रवासी साहित्य का आधार माना जा सकता है।

नॉस्टेल्जिया का अर्थ है कि घर की याद या फिर अतीत के परिवेश में विचरना। इन सभी स्थितियों मं सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण है। आधुनिक समय में कहानी प्रवासी साहित्य की मुख्य विधा बन गयी है। उषा प्रियंवदा के 'मछलियाँ', सुषम बेदी के 'चट्टान के उपर चट्टान के नीचे', सुधा ओम ढींगरा के 'सूरज क्यों निकलता है', 'कमरा नम्बर 103' आदि प्रवासी साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। उषा प्रियंवदा, निर्मल वर्मा, सुधा ओम ढींगरा, सुरेन्द्र कालिया, अर्चना पेन्यूली, दिव्या

माथुर, शैलजा सक्सेना आदि आधुनिक हिंदी के प्रवासी लेखक हैं।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के वरिष्ठ कथाकार है निर्मल वर्मा। "हिन्दी कहानी में आधुनिकता - बोध लानेवाले कहानीकारों में निर्मल वर्मा का अग्रणी स्थान है। उन्होंने कम लिखा है, परंतु जितना लिखा है उतने से ही वे बहुत ख्याति पाने में सफल हुए हैं। उन्होंने कहानी की प्रचलित कला में तो संशोधन किया ही नहीं प्रत्यक्ष यथार्थ को भेदकर उसके भीतर पहुँचने का भी प्रयत्न किया है।"[4]

पढाई के बाद निर्मल जी नौकरी के लिए विदेश चले गये। "1959 से चेकोस्लोवाकिया के प्राग के प्राच्य विद्या संस्थान में सात वर्ष तक रहे। उसके बाद लन्दन में रहते हुए टाइम्स ऑफ इंडिया के लिए सांस्कृतिक रिपोर्टिंग की।"[5] चेकोस्लोवाकिया में रहकर चेक उपन्यासों तथा कहानियों का हिन्दी अनुवाद किया। बाद में लंदन में प्राध्यापक का कार्य संभाला। निर्मल वर्मा को हिन्दी और अंग्रेजी में समान अधिकार था। अपने अध्ययन-अध्यापन के दौरान उनको अनेक देश के एवं उनके जीवन संबन्धी अनुभव प्राप्त करने का सौभाग्य मिला। उनकी अधिकांश रचनाओं में विदेशी लोगों की संस्कृति, रीति-रिवाज़, साहित्य, परंपरा आदि का सूक्ष्म विवेचन हुआ है। अपने जीवन के अधिकांश समय उन्होंने यूरोप में बिताया। नामवर सिंह के शब्दों में "निर्मल वर्मा लम्बे समय तक यूरोप में रहने के कारण कुछ हद तक प्रवासी जैसे हैं।"[6]

निर्मल वर्मा की अधिकांश कहानियों की कथावस्तु यूरोप केन्द्रित है। यूरोप के प्रवासी भारतीयों की निराशा, अकेलापन, लौटने की लालसा आदि उनकी कहानियों की विशेषता है। 'लंदन की एक रात', 'एक दिन का मेहमान', 'पिछली गार्मियों में', 'दूसरी दुनिया', 'एक शुरुआत', 'अमालिया', 'छुट्टियों के बाद', पराये शहर में आदि उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं, जिनमें प्रवासी जीवन की विसंगति और विडंबना की सहज अभिव्यक्ति हुई है। विदेशी जीवन की सबसे बड़ी विशेषता अकेलापन है। भारत में सामाजिक जीवन इतने ताने-बाने में बुना है कि लोगों को अपने अकेलेपन का उतना अहसास नहीं होता। विदेश में दाम्पत्य जीवन के तनाव, विवाहेतर संबन्ध, बेरोज़गारी, अकेलापन आदि जीवन से बहुत जुडे हुए हैं। स्त्री-पुरुष संबन्धों में बदलाव, महानगरीय जीवन के रिश्तों में बदलाव आदि विदेशी संस्कृति की पहचान है । थकावट, हताशा, निराशा, शून्यता आदि से भरकर वैयक्तिक जीवन एवं सामाजिक जीवन दूषित होता है । निराशा एवं शून्यता को मिटाने के लिए वे विवाहेतर संबन्ध में डूब जाते हैं और उसके दुष्परिणामों का फल भोगते हैं। 'दो घर', 'बावली', 'आदमी और लड़की', 'धागे'आदि विवाहेतर संबन्धों की समस्या को चित्रण करनेवाली कहानी है।

'दो घर' पूर्ण रूप से प्रवासी जीवन की कथा है। विदेश में बसने वाले भारतीयों को वास्तव में दो परिवार होते हैं। इस तथ्य को निर्मल जी ने इस कहानी के माध्यम से अनावृत किया है। दो घर एक ऐसे आदमी की आत्मसंघर्ष की कहानी है, जो अपने देश में परिवार होकर भी विदेश में बसाये अपने परिवार को गुप्त रूप से सुरक्षित रखना चाहता है। इस कहानी का नायक भारत से आया है और नौकरी के लिए विदेश में बसा है। यूरोप में बसते वक्त एक दिन वह बीमार हो जाता है। इस समय वहाँ के एक नर्स उनकी सेवा करती हैं। धीरे धीरे दोनों के बीच प्रेम पलते हैं और दो बच्चे भी पैदा हो जाते हैं।

उन बच्चों की कठिनाई यह है कि गोरों के बच्चे उनके साथ खेलते नहीं। वे उन्हें जिप्सी कहकर चिढ़ाते हैं क्यों कि उनका रंग कुछ काला है। इस कहानी के कथा नायक का जन्म स्थान कलकत्ता है। कलकत्ता में पहले उनकी शादी हो चुकी थी। उनको एक बच्चा भी है। वे नौ साल तक कलकत्ता नहीं गये। वहाँ उनकी पत्नी और बेटा उनके आगमन की प्रतीक्षा से रहते हैं। वे चिट्ठियाँ भेजती हैं, लेकिन उनको इसका पता भी नहीं कि विदेश में अपने पति को दूसरी पत्नी है। वास्तव में कहानी का नायक शादी के एग्रीमेंट किए बिना ही नर्स के साथ रहता हैं। अर्थात् वे लिविंग टुगदर है। नायक और नर्स दोनों नियम की दृष्टि में अविवाहित दंपति है।

पाश्चात्य संस्कृति में व्याक्तिस्वतंत्रता को अधिक महत्व देता है। वे विवाह प्रथा को एक बंधन मानते हैं। उनकी दृष्टि में विवाह व्यक्तिस्वतंत्रता नष्ट करनेवाला रिवाज़ है। भारतीय समाज में दाम्पत्य संबन्ध या विवाह वासना पूर्ति का साधन नहीं है। वह जीवन का पवित्र बंधन है, त्याग एवं समर्पण का चिह्न है। पति-पत्नी के बिना परिवार की संकल्पना अधूरा है। भारतीय संस्कृति में पारिवारिक जीवन की सफलता आपसी प्रेम एवं त्याग पर आश्रित है। इस कहानी का नायक अपनी पत्नी और परिवार को त्यागकर विदेशी युवती के साथ संबन्ध जोड़ता है और दाम्पत्य जीवन बिताता है। उनकी पत्नी देश में परित्यक्त होकर बच्चों के पालन पोषण में व्यस्त रहती है।

निर्मल जी की अधिकांश कहानियों के पात्र अविवाहित या विवाह संबन्ध में विश्वास न करने वाले होते हैं। यह दृष्टिकोण विदेशी संस्कृति की देन है। पाश्चात्य जीवन शैली का प्रभाव पाकर जीवन बितानेवाले भारतीय युवाओं का आत्मसंघर्ष ही उनकी रचनाओं का मुख्य विषय है। प्रस्तुत कहानी के द्वारा निर्मल जी ने प्रवासी जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। संक्षेप में कह सकते हैं कि निर्मल जी की अधिकांश रचनाएँ प्रवासी जीवन से संबन्धित है और उन रचनाओं के द्वारा प्रवासी जीवन का तनाव, अकेलापन, भय नोस्टाल्जिक चेतना, अतीत में विचरण, विवाहेतर संबन्ध, नैतिक मूल्यों का संकट आदि अत्यंत सहज रूप में पर्दाफाश करने का सफल प्रयास भी द्रष्टव्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रवासी साहित्यकार एवं उनका साहित्य। मनप्रीत सिंह पृष्ठ-35 अमन प्रकाशन 80-क रामबाग, कानपुर. 2019.
2. प्रवास और दारिद्र्य । डॉ मधुसंधु पृष्ठ-60 अमन प्रकाशन 80-C रामबाग, कानपुर. 20812. (वैश्विक संवेदन संसार और प्रवासी महिला कहानीकार एक अध्ययन) संग्रह।
3. प्रवासी साहित्य और हिन्दी भाषा का महत्व। संपादक - डॉ. मधुच्छन्दा चक्रवर्ती। लेखिका - डॉ. सूर्यबाला। पृष्ठ-9 अमन प्रकाशन, रामबाग, कानपुर ।
4. https//jivani.org/ Biography of Nirmal Varma.
5. गद्य के विविध आयाम। संपादक प्रो. जयमोहन एम. एस.पृ-44 वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली। 110002.
6. हिंदी साहित्य का इतिहास- डॉ नगेन्द्र, पृष्ठ-324. मयूर पेपर बैक्स, नोएडा।

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
एस.एन. कॉलेज, कोततोस

भोजपुरी लोकगीतों में राष्ट्रीय चेतना

डॉ.शशिकला & डॉ. मनोज सिंह यादव

लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, भविष्य और वर्तमान सभी समान रूप से समाहित हैं। लोक ही राष्ट्र का अमर स्वरूप है और लोकगीत लोकमानस की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम। लोकगीतों में जीवन की मधुरता, उल्लास एवं संवेदना का अक्षय भंडार भरा हुआ है। इसमें जीवन के किसी एक पक्ष का नहीं बल्कि समस्त ज़गत की अनुभूति दिखाई देती है। लोकगीतों की सहजता एवं सरलता आमजन को प्रभावित किये बिना नहीं रह पाती।

ऋग्वेद सबसे प्राचीन साहित्य है, इनमें मिलने वाली गाथाओं में लोकगीतों की प्राचीनता के संकेत मिलते हैं। इन गाथाओं के अतिरिक्त भी लोकगीत मौखिक रूप से जनमानस में विद्यमान रहे होंगे। ऋग्वेद के साथ साथ ब्राह्मण और आरण्यक ग्रन्थों में भी लोकगीतों के संकेत मिलते हैं। गाथाएँ, साधारण जनमानस के मस्तिष्क की उपज है। जब मनुष्य द्वारा कोई बात भाव विह्वल होकर कही जाती है तब व्याकरण के नियम ढीले पड़ जाते हैं और वाक्य विन्यास भावों के अनुरूप हो जाता है। गाथाओं के संदर्भ में कृष्णदेव उपाध्याय लिखते हैं- ये गाथायें राजसूय यज्ञ के अवसर पर गायी जाती थीं, परन्तु विवाह के अवसर पर भी गाथा के गाने का विधान मैत्रायणी संहिता में दिया गया है।"[1]

हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्र के अर्न्तगत भोजपुरी क्षेत्र भी आता है। हिन्दी भाषा के रचनाकारों द्वारा लिखे गये गीत भी भोजपुरी लोकगीत की धारा को आगे बढ़ाते हैं। भोजपुरी लोकगीतों का धरातल विस्तृत फलक पर विद्यमान था, वह केवल घरों तक ही सीमित नहीं थी अपितु सामाजिक, राजनीतिक एवं राष्ट्रीय चेतना से संपन्न थी। भारतेन्दु हरिश्चंद्र भोजपुरी क्षेत्र वाराणसी के रहने वाले थे, उनकी रचना भारत-दुर्दशा में राष्ट्र के प्रति चिन्ता को इस प्रकार व्यक्त किया गया है-

आवहु सब मिलिके रोवहु भारत भाई।
हा ! हा ! भारत दुर्दशा देखी न जाई।।"[2]

स्वाधीनता संग्राम में आल्हा गाथा का प्रभाव असाधारण था, डॉ. विद्या सिन्हा लिखती हैं- आल्हा लोक की जीवनी शक्ति और उर्जा का महाकाव्य है, यद्यपि आल्हा की मूल गायकी बनाफरी बुन्देली में है, लेकिन बुन्देली में ही उसकी कई वर्णन शैलियाँ हैं। इतना ही नहीं बैसवाड़ी, कन्नौजी, अवधी इत्यादि लोक भाषाओं में भी अलग अलग वर्णन शैलियों की शृंखला है। इनकी विभिन्न शैलियों में हर जनपद की भाषाएं मुहावरे और मिजाज के साथ वहाँ की लोक संस्कृति और लोक चेतना इतनी घुलमिल गई है कि वह उस लोक की अपनी कथा बन गई है। यह परम्परा लोककवि जगनिक के आल्हा गायन से प्रारम्भ हुई थी।"[3] आल्हा उदल की वीरता और 52 युद्धों का ओजपूर्ण वर्णन लोककवि जगनिक ने इस प्रकार किया है- "बड़े लड़इया महोबा वाले,/जिनकी मार सही ना जाए।/एक के मारे दुई मरि जावैं,/तीसर खौ खाय मरि जाए।।"[4]

भारत की आजादी के लिए जो प्रयास किए गये उनमें भोजपुरी लोकगीतों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम का प्रमुख केन्द्र भोजपुरी क्षेत्र ही था, इसी क्षेत्र में चम्पारन आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन, जलियाँवाला बाग हत्याकांड, संथाल विद्रोह इत्यादि घटनाएं घटित हुई। साधारण जनता अपनी भारत-माता को स्वतंत्र कराने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तत्पर थी। फिरंगियों की दासता से सभी त्रस्त थे, स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े दासता से मुक्तिके स्वर अलाप रहे थे- भारत में जब जब क्रान्ति भइल।/भोजपुर मनई तब रखले लाज।।"[5]

1857 का स्वतन्त्रता संग्राम लोक का संग्राम था, क्योंकि उस दौरान लोक साहित्य में अंग्रेजी राज के विरुद्ध जनजागरण उत्पन्न करने वाले अनेक लोकगीत विद्यमान थे। लोकगीतों का साहित्य मौखिक माध्यम से प्रसारित होता था, इसलिए इसकी पहुँच जन जन तक थी। लोकगीत जनमानस को स्वतन्त्रता संग्राम से जुड़ने की प्रेरणा प्रदान

करता था। वीर कुंवर सिंह के संदर्भ में भोजपुरी मगही गीत इस प्रकार प्रचलित है-कइलस देस पर जुलुम जोर फिरंगिया,/ जुलुम कहानी सुनी तड़पे कुंवर सिंह,/बनके लुटेरा उतरल फौज फिरंगिया,/ सुन सुन कुंवर हिरदय लागल अगिया।"[6]

पश्चिमी बिहार तथा पूर्वी उत्तर-प्रदेश भोजपुरी भाषा का गढ़ है और बिहार के भोजपुर जिले के राजा थे वीर कुंवर सिंह, जिन्होंने 1857 की क्रान्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। उनकी वीरता को आज भी भोजपुरी गीतों में सम्मान के साथ गाया और सुना जाता है-लिखि लिखि पतिया के भेजलन कुंवर सिंह/ए सुनु अमर सिंह भाय हो राम,/चमड़ा के टोंटवा दांत से हो काटे कि/छत्तरी के धरम नसाय हो राम।"[7]

1857 की क्रान्ति की विभिन्न घटनाओं को जोगियों द्वारा सारंगी पर गाकर देशभक्तिकी भावना को गाँव गाँव तक पहुँचाया जाता रहा है। चौरी-चौरा के डुमरी रियासत के बंधु सिंह का नाम स्वतन्त्रता संग्राम की आहुति में प्रमुखता के साथ लिया जाता रहा है। उनके बलिदान के सम्मान में आज भी ये पंक्तियाँ गायी जाती हैं-सात बार टूटल जब फांसी के रसरिया,/गोरवन के अकिल गईल चकराए,/असमय पड़ल माई गाढ़े में परनवा,/अपने ही गोदिया में माई लेतू तू सुलाए,/बंद भईल बोली रूकि गईली संसिया,/नीर गोदी में बहाते ले के बेटा क लशिया।।[8]

अर्थात् बंधु सिंह इतने दृढ़ इच्छशक्तिवाले वीर सैनिक थे कि उन्हें अंग्रेजों को सात बार फाँसी पर चढ़ाना पड़ा था। स्वतन्त्रता संग्राम के नायक-नायिकाओं की वीर गाथा लोकगीतों के माध्यम से गायी जाती है। रानी लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, बेगम हजरत महल, मंगल पांडे इत्यादि नायकों पर अनेक शौर्यगाथाएँ बिरहा, कजरी, आल्हा, झूमर गीतों में आज भी सुगन्धित हो रहा है। इन लोकगीतों में एक ओर आल्हा बिरहा के माध्यम से शहीद मंगल पांडे की वीरता का बखान किया गया है- मंगल पांडे अमर सपूत कै,/आज अमर दास्तां सुना।/बैरकपुर मां रहिन सिपाही,/बहुत रहिन बलवान सुना।।[9]

तो दूसरी तरफ झांसी की रानी लक्ष्मीबाई सभी महिलाओं की आदर्श हैं, उनकी वीरता के किस्से लोकगीतों में खूब प्रचलित है-

होइ गयी झांसी की रानी हो राम,
झांसी न देबै प्रान दै देबय,
रानी परन इहै ठानी हो राम,
गोदी कै पूत कौं पीठिया बाधि,
देखा तरवारि कै पानी हो राम,
छक्का छूटि गये अंग्रेजन कै,
जुग जुग अमर कहानी हो राम।।

भारत में मुगलों का शासन स्थापित होने के पष्चात् भारतीय आहत हुए थे, उनका मनोबल टूट चुका था। मुगल शासकों के अत्याचार और भारतीय स्त्रियों के सतीत्व की रक्षा हेतु उनके आत्मबलिदान का मार्मिक वर्णन लोकगीतों में हुआ है। भारतीय समाज के उच्च एवं समर्थ वर्ग ने भले ही पराधीनता स्वीकार कर ली हो किन्तु लोक और ग्राम ने कभी भी अपने को गुलाम नहीं होने दिया, उनमें स्वतन्त्रता का स्वर मुखर था। भारतीयों को जागरण का संदेष देता यह लोकगीत आज भी गाया जाता है-

जहवा रहिन जनमा वीर परताप सिंह,
औरो चैहान से सपूत रे फिरंगिया
देसवा की खातिर जे मरि मिटी गए,
तबहू न मथवा झुकाए रे रिंगिया
वही देसवा म आज अइसन अधम भये
चाटथे बिदेसिया कै लात रे फिरंगिया।।[10]

20वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही भोजपुरी लोकगीतों में गाँधी जी को लोक नायक के रूप में जाना जाता है। इनके द्वारा संचालित स्वतन्त्रता आन्दोलन संपूर्ण भारतवासियों के लिए सुखी जीवन की कल्पना थी। गाँधी जी द्वारा जो आदर्श अपनाये गये थे वह राष्ट्रीय आन्दोलन में आलोक स्तंभ का कार्य करते हैं। जन जन के हृदय में उनके एकादश आदर्श की छाप पड़ी हुयी थी। लोक में गाँधी के योगदान को इस रूप में गाया जाता है- गाँधी कहै, गाँधी कहै, मन चित्त लाइके,/पन्द्रह अगस्त के विजय पवले सैतालिस में जाइके,/ लाल किला पर झंडा गड़ले, तीन रंग रंगाई के।/सन् अड़तालीस तीस जनवरी के आइके, स्वर्ग में गइले हमके आजादी दिलाइ के।।[11]

गाँधीजी के चरखे का प्रभाव आज भी भारतीयों के मन-मस्तिष्क को प्रभावित करता है। उन्होंने चरखे से न

केवल स्वावलम्बन एवं आत्मनिर्भरता का पाठ पढ़ाया, अपितु यह शारीरिक श्रम, स्वदेशी की भावना, सहकारिता एवं सर्वधर्म समभाव का भी आधार बना। भोजपुरी जनमानस ने भी चरखे के महत्व को समझा, उनकी चिन्तन की भावना को ग्रहण किया, जिनके फलस्वरूप चरखे संबन्धी अनेक लोकगीत लिखे एवं गाये गये- अब हम कातबि चरखवा, पिया मति जाहु विदेसवा/हम कातबि चरखा सजन तुहु लाव,/मिलिहे एही से सुराजवा/होइहें सुराज तबे सुख मिलिहें/कटि जइहें सब के कलेसवा/देसवा के लाज रहे चरखा से/गाँधी के मानो सनेसवा।।[12]

भारत की आजादी के पश्चात् जब भारत की जनसंख्या अनियंत्रित रूप से बढ़ रही थी और भारत खाद्यान्न संकट से जूझ रहा था, संकट की इस स्थिति में तत्कालीन प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने 1965 ई0 में जय जवान जय किसान का नारा दिया। इन सभी घटनाओं ने भोजपुरी समाज को अत्यधिक प्रभावित किया। उनके जीवन पर पड़ने वाले ये प्रभाव उनके गीतों में इस प्रकार मुखरित हुए हैं- नेहरू के लड़इया नाहीं जीतबे रे चीनिया,/चाहे करू कतनों उपाय।/भल, भल मजवा उड़वले तें दोसती में,/अब जइहें अकिली भुलाई।।[13]

यहीं नहीं 1975 ई0 में लगी 11 महीनों के आपातकाल ने जनता को लोकतंत्र और आजादी का नहीं अपितु गुलामी का आभास फिर कराने लगा। अब उनको अपनी आजादी बेमानी लगने लगी, मस्तिष्क में फिर से वहीं गुलामी की पीड़ा दहकने लगी- सभे केहु कहे रामा देषवा आजाद भइल,/हमहू त जनतीं कि होते का अजदिया।[14]

इस प्रकार भोजपुरी लोकगीतों में ऐतिहासिक एवं स्वतन्त्रता सम्बन्धी अनेक घटनाओं का उल्लेख मिलता है। लोकगीतों की संस्कृति में राष्ट्रीय एवं राजनीतिक हलचलों की आवाज भी समायी हुयी है। साहित्य में समाज का प्रतिभाग इन्हीं लोकगीतों के माध्यम से हुआ है और राष्ट्रीय चेतना लोकगीतों से अलग नहीं है। लोकगीतों में कहीं वीर कुंवर सिंह के राष्ट्रभक्तिएवं देषप्रेम का वर्णन है तो कहीं महात्मा गाँधी के नेतृत्व में हुए राष्ट्रीय आन्दोलन का वर्णन स्त्रियों के गीतों में सुनाई पड़ता है। यहीं नहीं अंग्रेजी शासन के विरूद्ध भारतीय वीरों के प्राणों की आहुति एवं शहीदों की गाथा बिरहा लोकगीतों में मिलता है। लोकगीतों में राष्ट्रीय चेतना एवं स्वतंत्रता सम्बन्धी अनेक घटनाओं का उल्लेख मिलता है।

संपर्क सूत्र

1. कृष्णदेव उपाध्याय-भोजपुरी लोक साहित्य, विष्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 11
2. भारतेन्दु हरिश्चन्द-भारत-दुर्दशा, विष्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर, पृ. 21
3. विद्या सिन्हा-भारतीय साहित्य परंपरा और परिदृष्य, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, पृ. 82
4. https:/www.jagaran.com/lite/utar-pradesh/lucknow.city-folk-voice-played-an-important-role-in-India- Independence-said-singer-malini-jagaran-special-21992509.html
5. अर्जुन तिवारी-भोजपुरी साहित्य के इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 131
6. विद्या सिन्हा-भारतीय साहित्य परंपरा और परिदृश्य, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, पृ. 87
7. अहमद अल्ताफ अंसारी, परवीन निज़ाम (सं0) विष्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 11.12
8. प्रियंका सिंह- लोकगीतों ने जगाई क्रान्ति की अलख, जागरण.कॉम, 26 मई, 2022
9. https:/www.jagaran.com/lite/utar-pradesh/lucknow.city-folk-voice-played-an-important-role-in-India- Independence-said-singer-malini-jagaran-special-21992509.html
10. वही
11. अखिल भारतीय भोजपुरी परिषद,उ0प्र0-भोजपुरी लोकगीतों में गाँधी चर्चा, पृ. 47
12. वही, पृ. 50
13. अर्जुन तिवारी-भोजपुरी साहित्य के इतिहास, विष्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृ. 42
14- वही, पृ. 147

एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी
डॉ. मनोज सिंह यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
काषी नरेष राज. स्ना. महाविद्यालय, ज्ञानपुर, भदोही

नारी भी मानव है... साधन नहीं

डॉ.लता.डी

कान्हा ने की चोरी चीर की
अपनी प्रिय गोपीकाओं की
मासूम है वह , नटखट है
रही बातें मनोविनोद की ।
जब हुआ कौरव सभा में
चीर हरण द्रौपदी का
उसी कान्हा ने बचाया
उसके अभिमान को।
आयी अनंत धारा अंबर की
कृष्णा के तन को ढकने के लिए
रह गई बातें पुराण की
रह गई बातें द्वापर युग की।
इक्कीसवीं शती में
इस कलियुग में
होता है चीर हरण
बेचारी भारतपुत्रियों का ।
खुली सड़क पर , भरी गलियों में
शासन की निष्क्रियता में
प्रमत्त प्रतिशोधों के आवेगों में
प्रचण्ड दंगाग्नि में ।
प्रक्षुब्ध सांप्रदायिकता में
वंशीयता के विद्वेष में
आज भी बन जाती है
नारी निरी साधन।

कोई कान्हा नहीं आता
उसका मान नहीं बचाता
चहुर्दिशाओं में कोई भी
उसका करुण क्रन्दन न सुनता ।
इतिहास और पुराण साक्षी है
उसकी मौन वेदना की
समझ नहीं सकेगा कोई
उसके अंतर्मन की रुलाई ।
धर्म के , जाति के गिद्धों ने
जब चलाया उन्हें नग्न बदन
हाय ! धरा फट जाती तो
वे समा जातीं उसमें ।
पर ऐसा भी नहीं हुआ
किस शती में होगा
उसपर होनेवाली
अमानवीयता का अंत!

असिस्टेंट प्रोफेसर
सरकारी महाविद्यालय, मलप्पुरम
केरल
मो : 9497428960

साहित्य में किन्नर समाज का यथार्थ

डॉ.षेनुजा मोल.एच.एन

इक्कीसवीं सदी विमर्शों की सदी है। इसमें उल्लेखनीय विमर्श है - किन्नर विमर्श। भारतीय समाज अपनी विविधताओं के कारण परिपूर्ण है। इसकी पहचान है - विभिन्न संस्कृति और अनेकता में एकता। अनेकता में एकता का संदेश देनेवाला यह सभ्य समाज कई आयामों पर संगठित होकर विशिष्ट पहचान रखता है।

आज विज्ञान प्रगति की कई सीढ़ियाँ पार कर चुका है। लेकिन आज भी किन्नर समुदाय समाज से बाहर है। इनकी पीड़ा और तकलीफ को न ही जानने या समझने का प्रयास कोई करता है। समाज से बहिष्कृत और पीड़ित किन्नरों की अवस्था को सुधारने के लिए कागज़ी घोषणाएँ तो करती है लेकिन इसका पालन नहीं होता है। घर ,परिवार, माता-पिता, भाई-बहन, धन दौलत सब पर अधिकार होते हुए भी वे अपने अधिकारों से वंचित रहते हैं। किन्नरों के वर्ग विभाजन चार प्रकार से किया जाता है - बुचरा, नीलिमा, मानसा और हंसा। जन्म से ही अविकसित जननांगों के साथ जो पैदा होते हैं, जो जन्मजात न पुरुष है न स्त्री - उन्हें बुचरा कहा जाता है। किसी कारणवश जो स्वयं को किन्नर बनाने के लिए सौंप देते हैं उन्हें नीलिमा कहते हैं। शारीरिक रूप से किन्नर न होते हुए सिर्फ मानसिक तौर पर किन्नर होते हैं ,और स्वयं को विपरीत लिंग के अधिक निकट महसूस करते हैं - उन्हें मानसा कहते हैं। शारीरिक कमियों या नपुंसकता के कारण अपने को किन्नर मानने वाले किन्नर को हंसा कहते हैं।

धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखने पर पता चलेगा कि किन्नर समाज हमेशा से हाशिए पर रखा गया है , और उनसे अमानुषिक व्यवहार ही किया गया है। समय समय पर प्रशासन बदलते रहे। लेकिन किन्नरों से जुड़ी व्यवस्थाएँ, विचारधाराएँ आदि रूढ़ होती गई। 1994 में मुख्य चुनाव आयुक्तटी . एन शेषन द्वारा हिजड़ा समाज को मतदान का अधिकार प्रदान किया गया। यह उनके अधिकारों की लड़ाई का पहला कदम रहा। लेकिन स्त्री या पुरुष के रूप में ही यह अधिकार प्रयुक्त कर सकते थे, जो उनके लिए बड़ी चुनौती सिद्ध हुई। महिलाओं के लिए आरक्षित सोहागपुर सीट से चुनाव लड़ने के कारण शबनम मौसी का चुनावी नामांकन रद्द किया गया। 2009 में चुनाव आयोग ने स्वतंत्र श्रेणी मानते हुए किन्नरों को मतदान का अधिकार दिया और साथ में स्त्री पुरुष से भिन्न 'अन्य'की श्रेणी में इन्हें रखा गया । इसके साथ मतदान करने और स्वतंत्र रूप में चुनाव लड़ने का अधिकार इन्हें मिला। आज भी किन्नर हाशियापरक जिंदगी को जोड़कर अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए निरंतर लड़ रहा है। उनको तरह-तरह की कठिन समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है।

सराहनीय बात है कि किन्नरों की समस्याओं पर प्रकाश डालने और उन्हें उजागर करने के लिए हमारे साहित्यकार अश्रांत प्रयास कर रहे हैं। नीरजा माधव (यमदीप), अनसूया त्यागी (मैं भी औरत हूँ), मनोज रूपड़ा (प्रति संसार), भुवनेश्वर उपाध्याय (हाफमैन), राजेश मलिक (आधा आदमी), मुक्ति शर्मा (श्रापित किन्नर), गिरिजा भारती (अस्तित्व), मोनिका देवी (अस्तित्व की तलाश में सिमरन), प्रदीप सौरभ (तीसरी ताली), भगवंत अनमोल (जिंदगी 50-50), चित्रा मुद्गल (पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा), महेंद्र भीष्म (किन्नर कथा, मैं पायल),

लवलेश दत्त (दर्द न जाने कोई), डॉ. लता अग्रवाल (सिसकती दास्तान, दहलीज का दर्द) तथा निर्मला भुराड़िया (गुलाम मंडी) आदि कुछ साहित्यकार ऐसे हैं , जिन्होंने अपनी रचनाओं में इस वर्ग को प्रमुख स्थान दिया है। इनके माध्यम से साहित्य में किन्नर विमर्श जैसी अवधारणा की सृष्टि हुई है जिससे किन्नर समाज तथा उनकी समस्याओं से पाठक परिचित हो रहे हैं।

निराला ने 'कुल्ली भाट' में समलैंगिक विमर्श का बीज बोकर हिंदी में समलैंगिक विमर्श की आग जला दी। किन्नरों की पीड़ा और दयनीय हालत को दर्शानेवाली शिव प्रसाद सिंह की कहानियाँ है - बहाव वृत्ति और बिंदा महाराज। वृंदावन लाल वर्मा रचित 'नीलकंठ' भी इस संदर्भ में विशेष उल्लेखनीय है। महेंद्र विष्णु जी के 'किन्नर कथा' उपन्यास में राजघराने में जन्मी चंदा की कथा है। नीरजा माधव के 'अमृत' उपन्यास में किन्नरों के सामाजिक, शारीरिक, मानसिक स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है । 'गुलाम मंडी' उपन्यास में किन्नरों के जीवन की त्रासदी और सामाजिक उपेक्षा के दर्द को अभिव्यक्त किया है। 'तीसरी ताली' उपन्यास में आनंदी आंटी और गौतम साहब इस डर के कारण दरवाजा नहीं खोलते हैं, कि वह हमारे बच्चों को उठा ले जाएंगे ।

'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा' में चित्रा मुद्गल जी ने किन्नर समाज की दशा और दिशा का परिचय पाठकों को देते हुए हिजड़ों की जिंदगी से संबंधित व्यक्तिगत और सामाजिक सरोकारों को पाठक के सामने प्रस्तुत कराने का प्रयास किया है। चित्रा जी के अनुसार लंबे समय से मेरे मन में पीड़ा थी एक छटपटाहट थी , आखिर क्यों हमारे इस अहम हिस्से को अलग-थलग किया जा रहा है। हमारे बच्चों को क्यों हमसे दूर किया जा रहा है। आजादी से लेकर अभी तक कई रोडिया टूटी लेकिन किन्नरों की जिंदगी में कोई बदलाव नहीं आया। उपन्यास एक बड़ा प्रश्न उठाता है कि लिंग पूजक समाज लिंग महीनों को कैसे बर्दाश्त करेगा। उपन्यास इस प्रश्न पर गंभीरता से सोचने को विवश करता है कि आखिर एक मनुष्य को सिर्फ समाज बहिष्कृत क्यों होना पड़े कि वह लिंक दोषी है?"[1]

'मैं पायल' (महेंद्र भीष्म) उपन्यास की पायल टीवी धारावाहिक में काम करने वाली है । एक एन जी ओ भी चलानेवाली है। पिता द्वारा अत्याचार, भाई द्वारा प्रताड़ना और समाज द्वारा शोषण के बावजूद आगे बढ़ती है। उसकी वास्तविक पीड़ा और संघर्ष कोई नहीं जानता। ट्रेन में यात्री उसकी छेड़खानी करता है और रुपए देकर उसे अपनी हवस का शिकार बनाना भी चाहता है। "मेरी ओर उसने 20 रुपए का नोट बढ़ाते हुए कहा, ले रख ले और बाथरूम में जा आना। कुछ देर बाद वहाँ आया और मेरे पास पटककर बैठ गया और बोला क्यू री तू आई नहीं, ले 50 का नोट पकड़ आ जा जल्दी।"[2] पायल द्वारा पीलू दादा की पिटाई ने उसकी एक दबंग वाली छाप खड़ी कर दी और उसीने उसे एक दिन किन्नर गुरु के रूप में स्थापित भी किया, लेकिन उसके भीतर जो विचार है, वह किसी से कहती है - जब कभी आंसू बहाने होते तब हम निपट एकांत तलाशते हैं या सोने के पहले चादर में ढक ले रहते हैं। कभी भगवान से अपना कसूर पूछते हैं तो कभी बिछड़े माँ-बाप भाई को याद कर रोते हैं। इतना ही नहीं जब किन्नर बच्चे को उसके घर उसकी माँ, भाई -बहनों से अलग कर दिया जाता है, तो इस विस्थापन की पीड़ा उसके अतिरिक्तकौन जान सकेगा।" [3]

'तीसरी ताली' उपन्यास में प्रदीप सौरभ समाज को दोषी मानते हुए कहते हैं - 'हम सब असल में एक सामंती मानसिकता या कहे लिंगधारी मानसिकतावाले समाज में रहते हैं। गर्व का भाव है, मानसिक रूप से ग्रस्त बच्चों को हम करोड़ों रुपए खर्च करके पालते हैं, लेकिन लिंग अस्वस्थता वाले बच्चे को हम तुरंत परिवार से बाहर कर देते हैं। हमारा पुरुष और हमारी मर्दानगी अच्छे काम की

बजाय जब तक मूछों से तब होगी तब तक इस मानसिकता से छुट्कारा संभव नहीं।'4 'तीसरी ताली' उपन्यास तथ्य एवं बेचारी की दोनों दृष्टियों से किन्नर समाज की व्यथा एवं संघर्ष को पाठकों के सामने प्रस्तुत करता है और समाज द्वारा त्याज्य वर्ग के साथ अमानवीय व्यवहार कितना अनिश्चित है यह सोचने पर भी मजबूर करता है। इसमें हम सदियों से पीड़ति समाज का अभिन्न अंग किन्नरों की मूल संवेदना को व्यक्त करने के साथ-साथ किन्नर समाज के विभिन्न परिस्थितियों को आधार बनाकर उनकी व्यथा का मार्मिक अभिव्यक्तिभी प्रस्तुत किया है। किन्नरों की पारिवारिक ,सामाजिक, शैक्षिक एवं आर्थिक समृद्ध के विभिन्न अंगों को सामने लाते हुए कठिन और विषम परिस्थितियों को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है ।

निर्मला भुराडिया कृत 'गुलाम मंडी' उपन्यास में लेखिका ने किन्नरों की तुलना कौओं से की है। कल्याणी और अंगूरी कौओं को पिंजरे में देखकर आश्चर्यचकित रह जाती है। हमीदा कल्याण को देखकर कहती है - 'हमारी जात के तो ये ही हैं। हमारे सगेवाले। तुम लोग उनको दुरदुराते हो, हम मोहब्बत से पालते हैं। 'जिस प्रकार हमारे समाज में किन्नरों को कलंक माना जाता है उसी दौर पर कब हमको भी अशुभ मान कर हमेशा उन्हें दुत्कार थे सभी पक्षियों में उसे सर्वाधिक बदसूरत और अशुभ माना जाता है, उसी तौर पर किन्नरों को भी अशुभ मानकर उपहास का विषय मानकर उन्हें अपमानित करता है और उसके मानवीय अधिकारों से वंचित रखा जाता है।

'गुलाम मंडी' में किन्नरों की जिंदगी के यथार्थ को पाठकों के सामने पेश किया है। स्वाधीनता के इतने सालों बाद भी किन्नर समाज दयनीय एवं अभावग्रस्त जीवन जीने को मजबूर है। 'फिलहाल अंगूरी उसे जहां ले आई थी, वह एक संकरी गली थी। मोहल्ले में आमने-सामने के घर ऐसे लगते थे मानो खिड़की - छज्जे से ही एक दूसरे का हाथ पकड़ा जा सकता हो। आंगन कच्चा -पक्का था ।कहीं पूरा फर्श था तो कहीं टूटा। एक ओर पानी का मटका रखा था। पास में ही गली हुई लकड़ी की एक कुर्सी।"5 यहां छोटी-छोटी बस्तियों में गंदगी में रहने को विवश किन्नरों के यथार्थ का पता चलता है, जिन्हें विकट परिस्थितियों में जीवन यापन करने की मजबूरी है।

किन्नरों को लेकर कई भ्रांतियां फैलाई जाती हैं, जिनसे समाज में नफरत के बीज बोए जाते हैं । कल्याणी ने फीकी मुस्कान दी।चेहरे पर थोड़ा डर भी था। उसने सोचा, उसने शायद ज्यादा ही हिम्मत कर ली है। तभी तो उन अनजान लोगों के घर पर आ गई है जिनकी बिरादरी के बारे में वह कुछ जानती समझती नहीं थी और इनके बारे में उड़ती हुई जो बातें बचपन से वह सुन रही थी उनमें से कुछ तो काफी डरावनी थीं। 'हिजड़े उठा ले जाएंगे, झोली में भर के।ऐसी बातों से समाज में किन्नरों के प्रति नफरत और डर उपजता है। 'गुलाम मंडी' उपन्यास के ज़रिए समाज में प्रचलित इन पूर्वाग्रहों से अवगत होने का अवसर मिलता है।

उपसंहार :- समाज के विकास के लिए किन्नरों के प्रति अपना दृष्टिकोण बदलना अनिवार्य है। समाज को समझना चाहिए कि लिंग परिवर्तन के कारण उसे दैनिक जीवन के कार्य करने में कोई परेशानी नहीं होती है। एक स्वस्थ साधारण व्यक्ति जो कार्य करता है, वे सारे काम एक किन्नर भी करने में समर्थ है। अतः इनमें कोई शारीरिक या मानसिक दोष नहीं होता। साहित्य एवं शोध कार्य के ज़रिए इनको समाज की मुख्यधारा में लाने का जो अश्रांत प्रयास हमारे साहित्यकार कर रहे हैं, बिलकुल सराहनीय है।

संदर्भ ग्रंथ

1. पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा - पृ. 8 चित्रा मुद्रगल, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली
2. मैं पायल-महेंद्र भीष्म पृ. 48, अमन प्रकाशन, कानपुर
3. मैं पायल - महेंद्र भीष्म पृ. 53, अमन प्रकाशन कानपुर
4. तीसरी ताली-प्रदीप सौरभ पृ.47, वाणी प्रकाशन
5. गुलाम मंडी - निर्मला भुराडिया पृ.65 सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

सहायक प्राचार्या एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
सरकारी कोलेज नेटुमंगाट् , केरल ।

मैत्रेयी पुष्पा और रमणिका गुप्ता की आत्मकथाः एक तुलनात्मक अध्ययन

अखिल. ए

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथाएँ हैं कस्तूरी कुंडल बसै और गुड़िया भीतर गुड़िया। रमणिका गुप्ता की आत्मकथाएँ हैं आप हुदरी और हादसे। इन दो आत्मकथाओं को तुलनात्मक दृष्टि में देखने पर इन लेखिकाओं की सामाजिक, पारिवारिक परिवेश और वैयक्तिक दृष्टिकोण में समानता और विषमता देख सकते हैं।

मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में जो महत्वपूर्ण बातें देखने को मिलते हैं वह यह है कि लेखिका पुरानी परंपराओं को तोड़कर निर्माण की आकांक्षा नहीं करती। मैत्रेयी पुष्पा की दृष्टि में पारंपरा पुरानी और नई भी हो सकती है। पुरानी परंपरा में नवीन तत्वों और दृष्टिकोण के जोड़कर उसे समकलीन समय के अनुसार प्रयाग में लाना है। समाज में स्त्री का विवाह के बाद एक ही काम है पति सेवा। इसके लिए स्त्री को पाढाई-लिखाई, हँसन-बोलना, अपनी सोच सब भूलना पड़ता है। विवाह के बाद मैत्रेयी पुष्पा को इस प्रकार की कुप्रथाओं को सामना करना पड़ा। डॉ. देवर के अनुसार परामर्श में मैत्री सी, सेवा में नीत दासी, भोजन में माता समा है, शयन समय रंभा सी है। ऐसी ही पत्नी का आदर्श रूप मानता है उसकी पति।"1 लेकिन मैत्रेयी पुष्पा अपनी अस्तित्व को भूलकर आगे बढ़ाने में सहमति न थी। डॉक्टर अपनी पत्नी को 'गँवारी' कहकर उसे कोई महत्त्व न देती थी। दीक्षांत समारोह में न ले जाना, यू. पी. ए. सी चेयरमैन से अभिवादन करने नहीं देना, उसके लिए आया कॉललेटर को छुप करके रखना आदि सभी घटनाएँ इसके लिये उदाहरण थीं।

इसके विरुद्ध मैत्रेयी पुष्पा का दृष्टिकोण यह था कि "यदि कोई पति-पत्नी का कोमल भावनाओं को कुचलकर खत्म करता है तो पत्नी को पतिव्रता के नियमों का उल्लंघन हर हालत में करना हो।"2 पति द्वारा गंवार कहकर नीचा दिखाना मैत्रेयी पुष्पा को पसंद नहीं था। वह अपनी जमीन पर खड़ी होकर अपनी अस्तित्व की लड़ाई लड़ती है। उस जमीन को वह एक पल के लिए भी नहीं छोड़ती। वह अपने परिवार को तोड़कर अपनी निजी जीवन की रस लेने में सहमत न थी, अपने परिवार में खड़े रहकर उसे साथ लेकर अपनी अस्तित्व की लड़ाई शुरू किया। मैत्रेयी पुष्पा एक ओर परंपरागत रीति-रिवाज़ों और शोषण से उबरने की बात करती है, वहीं दूसरी ओर आत्मनिर्भरता और स्वावलंम्बी चेतना का प्रबल समर्थन भी करती है।

मैत्रेयी पुष्पा की माँ कस्तूरी का जो चित्रण आत्मकथा में किया है वह मैत्रेयी पुष्पा की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण है। परंपरागत रीति-रिवाज़ों को तोड़कर आगे बढ़ने के लिए वह तैयार होता है। वे अपनी बेटी को स्वावलम्बी बनाने के लिए शिक्षा प्रारंभ करती हैं। अपनी पति की मृत्यु के बाद हाथ बाँधपर हाथ बैठने वाली नहीं थी। वह शिक्षा लेने के लिए घर से बाहर निकलती है। गाँव के लोगों के ताने सुनती है। वह परंपरा तोड़ने में क्षमता रखने वाली स्त्री थी। जैसे रमणिका गुप्ता एवं मैत्रेयी पुष्पा की माँ कस्तूरी में जिद्द का अंश कुछ अधिक था। ये ज़िद्दी के कारण ही इन लोगों को अपने जीवन में कुछ बदलाव लाने में सफल हुई। रमाणिका गुप्ता मैत्रेयी पुष्पा की विचारधारा के विपरीत दृष्टि रखनेवाली व्यक्ति थी। रमणिका गुप्ता परंपरा को तोड़कर

स्त्री को आज़ादी लेने का उपदेश अपने आत्मकथा के माध्यम से पाठकों के सामने रखती हैं।

रमाणिका गुप्ता का कथन है- "मुझे नहीं चाहिए अच्छे घर के रिवाज़, मैं नहीं बनूँगी अच्छे घर की बेटी। मैं नहीं मानूँगी कोई पुरानी बात, मैं अपना रिवाज़ चलाऊँगी।"3 लेखिका प्रचलित रीति-रिवाज़ों को बदलना चाहती हैं। उनकी राय में ये रीति-रिवाज़ ही लड़की की स्वतंत्रता में बाधा बनती है। इसी प्रकार ही कस्तूरी भी अपने गाँव में प्रचलित कई रीति-रिवाजों को तोड़कर निर्माण करने में प्रयत्न करती है कि जैसी अपनी बेटी की कान नाक छिदवाना को विरोध करना, अपनी बेटी को अच्छी में शिक्षा देना 1960-65 के समय बिना पुरुष के सहारे अपनी बेटी को वर खोजने के लिए कदम उठाना आदि। रमणिका गुप्ता भी अपने पारिवारिक जीवन से ज़्यादा सामाजिक जीवन को महत्व दिया। उनका कथन है- "परिवार के लिए तो सभी लोग कुछ करते हैं। जो दूसरों के लिए कुछ करे वही इनसान है।"4 इसमें से यह बात व्यक्तहै कि मैत्रेयी पुष्पा अपनी व्यक्तिगत जीवन यानि अपने परिवार को महत्व दिया। अपनी बेटियों की पढ़ाई और अन्य बातों पर अधिक ध्यान दिया। बोटियों ने भी अपनी माँ को लेखन कार्य में आगे बढ़ने में समर्थन दिया।

रमणिका गुप्ता अपनी बेटी तरंग को छोड़कर धनबाद में अकेली रहती है और वहाँ के आदिवासी मज़दूरों के हक के लिए लड़ती है। रमणिका गुप्ता स्त्रियों को समाज के विपरीत चलने की सलाह देती है। स्त्रियों के प्रगति में पति, बच्चे और पारिवारिक जीवन सबसे बड़ी मज़बूरी बन जाते हैं। रमणिका गुप्ता के मत में बच्चे, पति और परिवार की देखभाल करके अपना अस्तित्व मिटाकर आदर्श बनने की क्या जरूरत है। स्त्रियों के लिए पितृसत्तात्मक समाज द्वारा आदर्श का प्रमाण नहीं चाहिए।

निष्कर्ष रूप में कहा जाए तो मैत्रेयी पुष्पा और रमणिका गुप्ता दोनों अपनी आत्मकथाओं के द्वारा सामाजिक, पारिवारिक एवं वैयक्तिक दृष्टिकोणों को पाठक के सामने रखती हैं। समाज और परिवार में जो-जो परंपराएँ और रीति-रिवाजें बनी हुई हैं उसे बदलने का प्रयास इन दो आत्मकथाओं में देख सकते हैं। लेकिन इन लेखिकाओं के पारिवारिक दृष्टिकोण में तुलना करते वक्त उसमें विषमता देख सकते हैं। मैत्रेयी पुष्पा अपने परिवार के भीतर रहकर अपनी मुक्ति के लिए लड़ाई करती है और उसमें सफल हो जाती है। अपनी युवावस्था में शिक्षा को महत्व नहीं दिया। अपनी माँ कस्तूरी के इच्छ विरुद्ध वह डॉक्टर से विवाह करती है। बाद में वह इसके विरुद्ध लड़ाई शुरू करती है, और परिवार, समाज में पति के साथ बराबरी का अधिकार पाने में सफल हो जाती है। लेकिन रमाणिका गुप्ता की पारिवारिक दृष्टकोण बिल्कुल अलग था। वह परिवार को स्त्री की प्रगति हेतुबाधा मानती हैं। इस तरह विभिन्न दृष्टिकोण होना एक व्यक्तिगत निर्णय है। अपने निर्णयों में वे अटल रही और सफलता भी हासिल की।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गुडिया भीतर गुडिया मैत्रेयी पुष्पा, पृ सं 9
2. गुडिया भीतर गुडिया मैत्रेयी पुष्पा, पृ सं 15
3. आप हुदरी रमणिका गुप्ता, पृ सं 33
4. आप हुदरी रमणिका गुप्ता, पृ सं - 27

शोधछात्र, हिन्दी विभाग
महात्मा गाँधी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम
केरल विश्वविध्यालय
फोन : 7012894630
ई मेल : kannanajayan033@gmail.com

'अन्या से अनन्या' में प्रतिपादित नारी संघर्ष

अश्विनी अजी

शोधसार : आत्मकथा हिन्दी गद्य की एक ऐसी विधा है, जिसमें लेखक अपनी ही कथा स्मृतियों के आधार पर लिखता है। लेखक निष्पक्ष रूप में आत्मकथा लिखता है। आज आत्मकथा लेखन विधा को अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त हो रहा है तथा गद्य साहित्य में भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्राप्त हो रहा है तथा साहित्य में भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व की छाप बना रही है।

बीज शब्द नारी, आत्मकथा, विवाह, पितृसत्तात्मक, स्वतंत्रता

आत्मकथा एक दुर्लभ और विशिष्ट रचनात्मक साहित्यिक कला है। भारत में आत्मकथा लेखन पश्चिमी आत्मकथात्मक परंपरा के प्रभाव से आरंभ हुआ। आत्मकथा आत्म-अभिव्यक्ति का एक बहुत ही स्वाभाविक और सौन्दर्यपरक रूप है। यह लेखक के जीवन में दिन-प्रतिदिन की घटनाओं को दर्ज करती है, जिसे वह अपने व्यक्तित्व को प्रस्तुत करने के लिए महत्वपूर्ण मानता है। कहानी और उपन्यास की घटनाएँ काल्पनिक हैं जबकि आत्मकथा में कल्पना के लिए कोई स्थान नहीं है क्योंकि 'सत्य' आत्मकथा की 'आत्मा' है। आत्मकथा, जीवन की एक लंबी किताब है। आत्मकथा की संरचना पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

हिन्दी साहित्यकारों में डॉ. प्रभा खेतान का स्थान सर्वोपरि एवं महत्वपूर्ण है। केवल साहित्यकार के रूप में ही नहीं, बल्कि एक श्रेष्ठ व्यवसायी महिला के रूप में भी उनका स्थान अद्वितीय है। उनका व्यक्तित्व बहुआयामी है। नारीवादी रचनाएँ लिखने में उनकी अद्भुत भूमिका है। उनके द्वारा अनुभव किए गए संघर्षों ने ही उन्हें महिलाओं के उत्थान के बारे में लिखने के लिए मजबूत बनाया। उनके द्वारा लिखे गए लेखन में उनके जीवन का प्रतिबिंब हम देख सकते हैं। वे एक प्रसिद्ध नारीवादी लेखिका हैं। वे कवयित्री होने के साथ-साथ गद्य लेखिका भी हैं। अधिकांश लोग समाज में अपने निजी जीवन को अभिव्यक्त करने से डरते हैं लेकिन जिन्होंने आत्मकथाएँ लिखीं, वे निडर होकर अपने जीवन में घटित सभी रहस्यों को प्रकट करने के लिए तैयार थे। इसके लिए एक उदाहरण है प्रभा खेतान की आत्मकथा 'अन्या से अनन्या'। अपनी आत्मकथा के माध्यम से नारी के अस्तित्व को खोजने का प्रयास किया है। उन्होंने पुरुषों और महिलाओं के बीच असमानताओं पर ध्यान आकर्षित किया है।

इस आत्मकथा में जिन मुख्य असमानताओं का वर्णन किया गया है, उसमें लैंगिक असमानता के साथ ही आर्थिक, सांस्कृतिक और सामाजिक असमानताएँ को भी हम देख सकते हैं। उन्होंने पितृसत्तात्मक विचारों और सामाजिक रीति-रिवाजों की भी व्याख्या की है। इन लोगों की नज़र में स्त्री की एक आदर्शवादी छवि थी। ये कस्तूरबा, भगिनी निवेदिता जैसे सफेद लिबास में पाक-पवित्र स्त्री की कल्पना से आक्रांत थे। स्त्री यदि विवाह न भी करे तो सामाजिक कामों में जुटी हुई स्त्री की तसवीर को ही ये आदर्श मानते थे।यदि उक्तस्त्री के जीवन में कुछ गलत हो तो भी सब कुछ दबा-टांका ही रहना चाहिए। स्त्री की किसी अलग पहचान से ये आतंकित हो उठते। लकीर से हटकर चलनेवालों के प्रति ये कठोर थे।"[2] पितृसत्तात्मक समाज में महिलाओं को कभी भी आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने का अधिकार नहीं मिलता है। समाज का मानना था कि महिला सफल हो या न हो,इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, शादी करना आपकी मुख्य प्राथमिकताओं में से एक होना चाहिए। भारत में अनगिनत महिलाएँ शादी करने का दबाव महसूस करती हैं और इसे अपने आत्म-मूल्य से जोड़ती हैं। महिलाओं को शादी करनी है और परिवार की विरासत को आगे बढ़ाना है क्योंकि यह सब संस्कृति का एक हिस्सा है, यह सब समाज के घोषित नियम है। सालों से महिलाओं ने कम उम्र में शादी करने के इस सिद्धांत का पालन किया है। लेकिन प्रभा खेतान इन रूढियों का पालन करने के लिए सहमत नहीं थी।

उसने डॉक्टर सर्राफ के साथ संबंधों का खुलासा किया। उसने बचपन में अपने भाई के साथ हुए यौन शोषण के बारे में भी लिखा। जीवन भर अकेलेपन से त्रस्त, अपने

विश्वासों पर टिके रहने का एकमात्र कारण यह था कि वह सफलता पाने के लिए संघर्षरत महिला थी। उनकी दादी ने बचपन से ही उनका लालन-पालन किया। क्योंकि उसकी माँ उसे प्यार करने को तैयार नहीं थी। प्रभा के पिता भी उससे बहुत प्यार करते थे। अपने पिता की मृत्यु के बाद, उन्हें अपने परिवार में अधिक संघर्ष करना पड़ा। उनका रंग गोरा नहीं था, इसी वजह से उनकी माँ उनसे दूरी बना लेती हैं। उसने अपनी माँ और भाई-बहनों से एक अच्छी बात नहीं सुनी। इतनी सुंदर आँखें मैंने आज तक नहीं देखीं।"[3] डॉ. सर्राफ पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने उन्हें प्रभावित किया। "इसलिए उन्होंने उसे अपने साथी के रूप में चुना। डॉ. सर्राफ पहले से ही शादीशुदा थे और उनके बच्चे भी थे।

तुम्हारे इन शब्दों का स्वाद मेरे लिए बड़ा अपरिचित है। किसी भी स्त्री के लिए, मेरे जैसे आदमी से प्यार करना बड़ा कठिन है। और फिर प्यार की मेरी उम्र भी नहीं....विवाहित हूँ, दो लड़के, तीन लड़कियों का पिता हूँ। चालीस से उपर की उम्र है। खुद अपनी नज़र में ये सारी बातें मुझे बड़ी अजीब लग रही हैं, आखिर ऐसा क्या है मुझमें?"[4]

डॉ.सर्राफ का विवाह उनकी इच्छा के अनुसार नहीं हुआ था। उनका प्रभा खेतान से रिश्ता था। लेकिन कभी-कभी इसने उसे एक नया जीवन बनाने और सही व्यक्ति खोजने के लिए मजबूर किया। लेकिन वह उसे छोड़ने को तैयार नहीं थी। वह अक्सर एक स्त्री होने के कारण घिरी हुई महसूस करती थी, लेकिन अपनी प्रतिक्रियाओं में आक्रामक थी - चाहे वह व्यवसाय चलाने का अधिकार हो, प्यार में हो, या अविवाहित रहना हो। सफल और स्वतंत्र होने की उसकी इच्छा सीधे उसके कार्यों के सामाजिक विरोध से उपजी है। अपनी असुरक्षाओं से परेशान होकर वह हमेशा अपने भीतर देखता था और यद्यपि उसका जीवन सफल रहा, यह सुखी नहीं था क्योंकि वह समाज की अपेक्षाओं से मुक्त नहीं हो पा रही थी। जबकि 'अन्या से अनन्या' उस समय के कलकत्ता की एक छवि देता है, जो मार्क्सवादी उपक्रमों से भरा हुआ है, इसके दिल में, यह एक प्यार में डूबी महिला और उसके प्रेमी की याद की कहानी है। इसीलिए आत्मकथा का अंत उसके प्रेमी की मृत्यु और उसकी स्मृति सभा से होता है, जहाँ 'प्रभा खेतान' नामक स्त्री का कोई उल्लेख नहीं था। पुस्तक आंशिक रूप से सर्राफ के साथ उसके संबंधों की समझ है, क्योंकि वह आश्वस्त थी कि वह उसके जीवन के सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति के जीवन में एक बाहरी व्यक्ति थी।

महादेवी जी ने ठीक ही कहा है - अंगार बनो। और अंगारा बनने के लिए तपस्या की जरूरत पड़ती हैं। आधुनिक स्त्री की तपस्या, पार्वती की तपस्या से भिन्न है। वह प्रार्थना करती है, उस प्रार्थना में वह सब कुछ माँगती है क्योंकि आज की पार्वती के लिए केवल पति ही काफी नहीं। पुरुष ने शिव के अलावा सत्य और सुंदर को चाहा तो स्त्री क्यों नहीं अपने जीवन में इसकी माँग करे? स्त्री भी न्याय और औचित्य की माँग करेगी। इस नए सर्जित संसार में प्रगति का प्रशस्त मार्ग, घर की देहरी से निकलकर पृथ्वी के अनन्त छोर तक जाता है। स्त्री को यह समझना होगा।"[5] आत्मकथा एक साहित्यिक शैली है जो किसी व्यक्ति के जीवन का स्व-लिखित लेखा है। यह अक्सर ऐसे लोगों द्वारा लिखी जाती है जो अपने विचारों और अनुभवों के पाठक को सूचित करने के प्रयास में अच्छी तरह से पहचाने जाते हैं या प्रसिद्ध होते हैं, लेकिन उन्हें लिखा जा सकता है किसी से भी। आत्मकथाएँ आमतौर पर बहुत व्यक्तिगत होती हैं क्योंकि लेखक उन घटनाओं से जुड़ा होता है जिनके बारे में वे लिख रहे होते हैं। प्रभा खेतान की आत्मकथा एक नारीवादी प्रतिनिधित्व का लेखा-जोखा है, जो स्वतंत्रता की उतनी ही उम्मीद करती है, जितनी उस आदमी से स्वीकृति की जिसे वह प्यार करती थी। खेतान ने चमड़े का कारोबार शुरू किया लेकिन पूरे परिवार ने इसका विरोध किया। इस तथ्य से अत्यधिक अवगत, उनकी आत्मकथा 'प्यार में दूसरी महिला' होने का एक स्पष्टता रखती है। आत्म-जागरूक और प्रेम और परंपरा के बंधनों के बीच फंसी हुई, वह दशकों के दौरान अपने संबंधों का एक खट्टा-मीठा लेखा-जोखा प्रस्तुत करती है। आत्मकथाएँ आमतौर पर लेखक के साथ समाप्त होती हैं कि भविष्य के लिए उनकी आशाएँ और योजनाएँ क्या हैं। वे इस बात पर चिंतन करते हैं कि अतीत में क्या हुआ है और इसने उस व्यक्ति को कैसे प्रभावित किया है जो वे अभी हैं। महिलाओं की आत्मकथाएँ महिलाओं की समस्याओं का सटीक चित्र प्रस्तुत करती हैं। महिलाओं की आत्मकथाओं के माध्यम से महिलाएँ केंद्रीय पात्र बन जाती हैं और वे अपनी वास्तविक छवियों को

समाज तक पहुँचाने का प्रयास करती हैं। वे घटनाओं के बारे में व्यक्तिगत विचार, भावनाएँ और राय शामिल करती हैं और अक्सर यह वर्णन करती हैं कि उनके बचपन या प्रारंभिक जीवन की घटनाओं ने उन्हें एक व्यक्तिके रूप में कैसे प्रभावित किया।'

'अन्या से अनन्या' नामक आत्मकथा हंस में प्रकाशित हुई है। यह बेहद बेबाकी से लिखी गई आत्मकथा हैं। डॉ. सर्राफ के साथ का संबंध, उनके भाई द्वारा बचपन में किए गए दुष्कर्म, उनकी माँ द्वारा उपेक्षित बाल्यकाल और उस समय के सामाजिक, आर्थिक स्थितियों का भी अध्ययन उन्होंने किया है। चमड़े का व्यवसाय, विदेश यात्रा और लेखन कार्य संबंधित समस्याओं को उन्होंने अपनी आत्मकथा में चित्रित किया है। खेतान ने अविवाहित रहने का फैसला लिया, वह अपना समय काम और अन्य गतिविधियों के बीच बांटती है। वह लगातार महिलाओं की भलाई, बच्चों की देखभाल के मुद्दों, शैक्षणिक और सांस्कृतिक संस्थानों के लिए काम करती हैं। डॉ. खेतान रेड क्रॉस, कलकत्ता की कल्याण इकाई के अध्यक्ष की और देश भक्त ट्रस्ट के ट्रस्टी थी। उन्होंने प्रभा खेतान फाउंडेशन नामक अपना स्वयं का ट्रस्ट स्थापित किया था। 'अन्या से अनन्या' में बताया गया है कि कैसे प्रभा प्यार, काम और आजादी के जुनून और परंपराओं और पारिवारिक बंदिशों के बीच अपनी खुद की पहचान बनाने के लिए खुद की महिला होने के बीच के कठिन रास्ते पर चलती है। उन्होंने कलकत्ता चैंबर ऑफ कॉमर्स की अध्यक्ष के रूप में कार्य किया था। उन्होंने प्यार और शादी की लोकप्रिय परिभाषाओं का विरोध किया और अपनी मर्जी से जीवन जिया। वह अपने विचारों में कठोर थी और उसने कभी भी अपने निर्णयों में परिवर्तन करने का प्रयास नहीं किया। 'अन्या से अनन्या' आत्मकथा में जो उसके बचपन, उस यौन शोषण को याद करता है जिसे उसे एक बच्चे के रूप में छिपाने की सलाह दी थी, अमेरिका में उसके अनुभव और उसके द्वारा अनुभव की गई सांस्कृतिक प्रेरणा। उन्होंने मुख्य रूप से डॉ. सर्राफ के साथ अपने आजीवन संबंधों पर ध्यान केंद्रित किया।

प्रभा खेतान का हिन्दी साहित्य में सम्मानजनक स्थान है। उन्होंने अपने साहित्य में महिलाओं के विभिन्न चेहरों को शामिल किया। उन्होंने अपने साहित्य कार्यों में आधुनिक महिलाओं और उनकी समस्याओं को महत्व दिया। वह महिलाओं को सामाजिक प्रतिबंधों से बचाना चाहती थीं। उनके लेखन उनके अपने जीवन के अनुभवों से प्रभावित हैं।संक्षेप में, यह एक महिला की कहानी है कि उसने शिक्षा को अपना जीवन जीने के लिए एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया। शिक्षा के माध्यम से उसने समाज में एक मुकाम हासिल किया और एक सफल व्यवसायी महिला बन गई। इससे उन्हें समाज द्वारा बनाई गई सभी सीमाओं का विरोध करने की शक्तिमिली।

संदर्भ ग्रंथ सूची

2. अन्या से अनन्या - प्रभा खेतान - राजकमल प्रकाशन - पृष्ठ संख्या - 245
3. वही पृष्ठ संख्या - 66
4. वही पृष्ठ संख्या - 68
5. वही पृष्ठ संख्या - 258

सहायक ग्रंथ सूची

1. डॉ. रंजित एम और डॉ. सूर्या बोस - हिन्दी कथा साहित्य में नारी-जवहर पुस्तकालय, हिन्दी पुस्तक प्रकाशक एवं वितरक, मथुरा (उ.प्र.) 281001
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास-डॉ.नगेन्द्र-मयूर बुक्स 2018
3. राजेन्द्र यादव-आदमी की निगाह में औरत (स्त्री विमर्श और स्त्री लेखन) - राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. 1बी, नेताजी सुभाष मार्ग
4. http://hdl.handle.net10603/307804
5. http://hdl.handle.net/10603/47323

शोधार्थी, हिन्दी विभाग
शोध निदेशक : **डॉ. जी. शान्ति**
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
अविनाशिलिंगम इनस्टिट्यूट फॉर
होम सयन्स एण्ड हयर
एजुकेशन फॉर वुमेन (कोयम्बत्तूर)

कविता

देवनागरी लिपि वंदना

मोहन द्विवेदी

जयति नागरी लिपि जयगान
इसका वंदन, इसका मान।
बहु परिकल्पित, अभिनव कल्पित
उच्चारण ध्वनि को संकल्पित।
सोच विनोबा, भाषा सेवा,
गाँधीजी का श्रेष्ठ विधान।

गुण वैज्ञानिक, अनुसंधानिक
तकनीकी में उच्च प्रामाणिक।
अद्‌भुत चिंतन, अविरल मंथन,
देवनागरी अमिय समान।

लिपि की रानी, कहते ज्ञानी
अब तो विज्ञानी भी मानी।
अक्षर अर्पित, शब्द समर्पित,
स्वर-व्यंजन का सम्यक ज्ञान।

देश जोड़ती, मौन तोड़ती
संबंधों की धार मोड़ती।
नव अन्वेषण, द्रुत संप्रेषण,
हर भाषा की है परिधान।

अनगिन बोली, सुगम सजीली
आश्रयदाता सबकी हो ली।
यह माँ-माटी, है परिपाटी,
भाषा का सम्यक प्रतिमान।

राष्ट्र एकता, अविरल क्षमता
भाषाओं की निश्छल समता।
श्रुति संपोषित, लिपि बिन शोषित,
उनका अभिनंदन गुणगान।

ताम्रपत्र पर, भोजपत्र पर
शिलालेख, पुर, दानपत्र पर।
ब्राह्मी जाया, सरल सुकाया,
सतत सनातन की पहचान।

प्रस्तुति पावन, है मनभावन
चमक रहा हिंदी का आंगन।
देवनागरी, विश्व नागरी,
इस पर है हमको अभिमान।

सरस्वती का यह वरदान,
जयति नागरी लिपि, जयगान।

डी 180 महिंद्रा एनक्लेव
शास्त्री नगर
गाजियाबाद 201 002

हिंदी साहित्य में दलित विमर्श :
(दलित कहानियों के विशेष संदर्भ में)

डॉ. धन्या.बी.

मूल आलेख

जिस साहित्य में दलित, बरसों से पीडित, शोषित व्यक्तियों के अंतरमन की अभिव्यक्तिके साथ -साथ मनुष्यत्व की कामना की जाती है वही दलित साहित्य है। दलित साहित्यकार भी दो प्रकार के हैं। दलित साहित्यकार और गैर दलित साहित्यकार। भक्तिकाल में कबीरदास से लेकर आधुनिक काल में प्रेमचंद, निराला, राहुल सांकृत्यायन आदि अनेक साहित्यकारों ने दलित जीवन की दयनीय अवस्था का मार्मिक चित्रण अपनी रचनाओं का विषय बनाया है ।

सबसे पहले वर्ण व्यवस्था की चुनौती सिद्धों और नाथों ने दी। क्योंकि उनमें काफी संख्या दलितों की थी। उनका विरोध विशेष रूप से धार्मिक आचार पर था। भक्तिकाल में निर्गुण कवियों ने जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठाया। आगे आते - आते दयानंद सरस्वती, राजा राम मोहन राय, बी आर.अंबेडकर आदि समाज सुधारकों ने भी दलितो के अधिकार के लिए आवाज़ उठायी। अब अनेक समकालीन साहित्यकार द्वारा समाज के सम्मुख हलचल मचानेवाली विधा के रूप में दलित विमर्श बन गया है।

दलित साहित्य को लेकर मतभेद

दलित साहित्य तर्क का विषय भी बन गया है। दलित रचनाकारों का कहना है कि प्रेमचंद, निराला, अमृत लाल नागर, नागार्जुन आदि सभी साहित्यकारों ने दलितों से जुड़े साहित्य बडी मार्मिक ढंग से रची है, लेकिन ये सभी सवर्ण हैं । इसलिए दलित समाज की पीडा, यातना, शोषण का प्रत्यक्ष अनुभव इन्हें नहीं है। कहने का मतलब यह है कि दलित समाज को विषय बनाकर लिखा गया इनका साहित्य, प्रामाणिक और प्रत्यक्ष अनुभूति का नहीं, बल्कि करुणा और सहानुभूति का साहित्य है।

प्रेमचंद की अनेक कहानियों और उपन्यासों में दलित जीवन की त्रासदी व्यक्तकी गयी है। एक हद तक उनकी राय सही मानना पड़ता है कि स्वानुभूति द्वारा रचित रचना, देखी - सुनी रचना से बहतरीन होगा ।

बीज शब्द *- दलित ,शोषित , अभिव्यक्ति , आवाज़ उठाना, वर्ण व्यवस्था*

हिंदी में दलित कहानियाँ

हिंदी में दलित साहित्य का शुभारंभ कहानियों और कविताओं के माध्यम से हुआ। दलित कहानियाँ तुरंत समाज का आईना बन गयीं। दलित कथा साहित्य के विकास पर दृष्टिपात करते हुए जय चौहान ने लिखा है - 'कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि दलित साहित्य अपरंपरगत परिवेश को जीवंत करती कहानियों का जन्म होना उत्तर भारत में प्रारंभ हो चुका है। आवश्यकता है, बस इसे एक रचनात्मक साहित्यक आन्दोलन बनाने की ताकि सदियों से सोया अल्प शिक्षित दलित समाज जाग्रत हो।"[1] हिंदी का अपना आस्तित्व विकास पर प्रमुख दलित कहानीकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि, जयप्रकाश कर्दम, सूरजपाल चौहान, दयानंद बटोही, रत्नकुमार संभरिया आदि आते हैं।

वाल्मीकी जी की 'सलाम' (2000) 'घुस पैठिए' (2003) आदि दो कहानी संग्रह पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए । 'सलाम' कहानी संग्रह में कुल 14 कहानियाँ संकलित हैं। 'सलाम', 'सपना', 'बैल की खाल', 'भय', 'कहाँ जाए सतीश', 'गोहत्या', 'ग्रहण', 'बिरम की बहु', 'पच्चीस चौका डेढ सौ', 'अंधड जिनावर', 'कुचक्र', 'अम्मा', 'खानाबदोश' आदि है। ओमप्रकाश वाल्मीकि जी ने अपनी

कहानियों के माध्यम से दलितों की समस्त समस्याओं और उनपर समाज में फैली विसंगतियाँ आदि को आम जनता तक पहुँचाने का प्रयास किया है।

2003 में प्रकाशित 'घुसपैठिए' बारह कहानियों का संग्रह है। उच्च शिक्षण संस्थाओं में दलित छात्रों के प्रति होनेवाले भेदभाव का यथार्थ चित्रांकन प्रस्तुत कहानी संग्रह में मिलता है।

2013 में प्रकाशित 'छत्तरी' कहानी संग्रह की सभी कहानियाँ दलित कथा संसार में नई दीवार खडी की और नए परिवर्तन दिये हैं। आपने अपनी सभी कहानियों के माध्यम से दलितों की समस्त समस्याओं को आम जनता तक पहुँचाने का प्रयास किया है। समाज में फैली विसंगतियों पर आपने अपनी तूलिका से शब्दों का तीखा तीर चलाया। गाँव में फैली हुई जाति - भेद की कठोर और मार्मिक चित्रांकन 'सलाम' कहानी संग्रह व्यक्त करता है, तो 'घुस पैठिए' उच्च शिक्षण संस्थाओं में दलित छात्रों के प्रति होनेवाले भेदभाव का ज्वलंत दृष्टांत है। वाल्मीकी जी के शब्दों में - 'सामाजिक शोषण को अपनी नियति मान लेने वाले दलित की जो आँखें खुलती है, तो उसकी जिह्वा पर उत्पीडन का दर्द शाप बनकर फूटता है।'[2]

जयप्रकाश कर्दम की 'तलाश', खरोंच आदि कहानियाँ भी प्रमुख दलित कहानियाँ हैं। आपकी कहानियाँ दलित राजनीति आंदोलन से प्रभावित होती दिखाई पड़ती है । 'मूवमेंट' कहानी इस तथ्य का उत्तम दृष्टांत है ।

सूरजपाल चौहान का 'हैरी कब आएगा' कहानी संग्रह में कुल मिलाकर 14 कहानियाँ हैं। दयानंद बटोही, रत्नकुमार सांभरिया आदि अनेक कहानीकारों ने अपने जिए हुए सच को अपने कथा संसार में कहीं न कहीं प्रस्तुत करते हैं। दलित समाज की समस्याएँ, मुद्दों और जीवित यथार्थ को अनुभव की सचाई से प्रस्तुत करते हैं।

निष्कर्ष : दलित जीवन की वास्तविकता, स्वत्वभाव, विद्रोह, संघर्ष, क्रांति का निर्माण, सवर्णों द्वारा झेलनी पडी समस्याओं का मार्मिक तथा सजीव चित्रांकन उपर्युक्तसभी दलित कहानियों में देखा जा सकता है । दलित कहानिकारों ने मानवीय संवेदना के सभी पक्षों का उद्घाटन किया है। दलित समस्याओं को मुद्दों के रूप में पाठकों के समक्ष रखती है। अनेक कहानी लेखक दलित कहानियों के माध्यम से पुनर्जन्म, भाग्यवाद, परंपराएँ, रूढियाँ, दासता, अंधविश्वास, जातिवाद के प्रति आक्रोश, उच्चनिम्नता, जातीय संकीर्णता इत्यादि के विरुद्ध आवाज़ उठाती दिखाई देती है।

सहायक ग्रंथ सूची

1) इक्कीसवीं सदी का दलित साहित्य, डॉ.भरत धोंडीराम सागरे, पूजा पब्लिकेशन
2) दलित साहित्य की भूमिका, कंवल भारती, परिवर्द्धित संस्करण, इतिहास बोध प्रकाशन
3) समकालीन हिंदी साहित्य और नए विमर्श - सं डॉ. प्रमाद कोवप्रद, जवाहर पुस्तकालय
4) सलाम - ओमप्रकाश वाल्मीकि - राजकमल प्रकाशन - वर्ष - 2000
5) छत्तरी - ओमप्रकाश वाल्मीकि - भारतीय झानपीठ प्रकाशन - 2003
6) दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र - राधाकृष्ण प्रकाशन 2001

संदर्भ ग्रंथ सूची

1) अंतिम दो दशकों का हिंदी साहित्य : सं मीरा गौतम पृ :119
2) दलित साहित्य का सौदर्य शास्त्र - ओमप्रकाश वाल्मीकि, पृ : 114

सहायक प्रोफेसर & विभागाध्यक्ष

सरकारी कॉलेज आट्टिंगल।

समकालीन हिंदी कविता में बाज़ारवादी संस्कृति

डॉ. अन्सा.ए

बाज़ारवाद ने अद्यतन हिंदी कविता के क्षेत्र में एक बहुत बड़ी चुनौती खड़ा कर दिया है। वैश्वीकरण के तहत पूरे ज़माने में जड़ जमा रहे बाज़ारवाद का जितना सख्त प्रतिरोध वर्तमान हिंदी कविता ने किया है उतना किसी अन्य भाषा की कविता शायद ही किया है। बाज़ारवाद के खरीद-फ़रोख्त की संस्कृति की साये में पले उपभोक्तावाद, मीडिया संस्कृति, विज्ञापनवाद एवं सूचना प्रौद्योगिकी आदि के अवांछनीय विकास हमारे भारतीय संस्कृति, निजी पहचान, परंपरागत मूल्यों, आदर्शों, आस्थाओं व मान्यताओं को अथाह कुएँ में डालने के लिए आँखें फाड़कर देख रहे थे। यहाँ तक कि आज कविता भी बाज़ार में बिकाउ चीज़ बन गयी है। हिंदी के वर्तमान कवि गण अपनी कविताओं के ज़रिए बाज़ारवाद का साहित्यिक प्रतिरोध कर रहे हैं। उनमें अपनी विलुप्त होती जा रही सभ्यता व संस्कृति को सुरक्षित रखने की अदम्य चाह है।

बाज़ार आज पूरे विश्व का नियंता बन चुका है। बाज़ारवादी नीति का मकसद विकसित देशों द्वारा विकासशील तथा अविकसित देशों का आर्थिक लाभ उठाकर उन्हें आर्थिक पराधीनता के अथाह कुएँ में डालने का है। इसके लिए विश्व बाज़ार अथक प्रयत्न करता रहता है। इनके पास इतने शस्त्र हैं कि इनके शिकंजे से बचना नामुमकिन है। इनसे हमेशा सतर्क रहना भी चाहिए, क्योंकि ये इतनी ताकतवर और चालाक है कि हमें निगलने के लिए षड्यंत्र रचते रहते हैं। इसका यथातथ्य वर्णन कुमार अम्बुज जी ने यों उभारा है- जो भाग नहीं सकते वे आसान शिकार है मेरे / जो भागते हैं उनका पीछा करता हूँ मैं/ जो करते हैं मुकाबला /उनसे होती है थोड़ी-बहुत दिक्कत/लेकिन फ़िलहाल मेरे पास / इतने आयुध हैं, इतनी चालाकी/वे मारे जाते हैं /अब एक/निष्णात व्यापारी हूँ मैं।"[1]

यहाँ अतिक्रमण संकलन की अथ पुरातन कथा शीर्षकीय कविता के ज़रिए कवि ने सम्पूर्ण विश्व अर्थात समूचे मानव जाति व अन्य चराचरों के समक्ष खतरा बनकर अडिग रहने वाले बाज़ार की आखेटक वृत्ति का खुलासा किया है।

बाज़ार वर्तमान का संचालक है। इसलिए कि इसे समाज तथा मानव जीवन में सर्वोत्तम व खास दर्जा प्राप्त है। यह मानव को ही नहीं मानवता को ही अपने काबू में रखती है। यही निर्णय लेते हैं कि आदमी को आगे क्या करना है। इस तरह बाज़ार ने इन्सान के भीतर से इंसानियत को छीन लिया है। इंसानियत को छीनना जीवन की सफलता छीनना है। इसे दर्शाता है संजय कुंदन की 'प्रबंधक' शीर्षक कविता के निम्नांकित चरण- ...वे चलते हैं एक सौदागर के आगे-आगे/...उनका खोजी दिमाग/ दिन-रात करता रहता हिसाब /कि कितना रखा जाए एक मनुष्य को बाज़ार में / कितना रखा जाए मनुष्य को घर में / कितना वर्तमान में / कितना अतीत में / कितना भविष्य में / कितना रहने दिया जाए /एक मनुष्य के भीतर मनुष्य।[2]

बाज़ारवाद का पहला औज़ार है विज्ञापन। यह क्रय-विक्रय में बढ़ावा देता है। बाज़ार में विज्ञापन के द्वारा ही हर चीज़ की बनावटी माँग तय करती है और उसे बेचा जा सकता है। बाज़ार में विज्ञापनों की जादूगरी, सामग्रियों का काया बल, उपभोक्ता की स्वच्छंद मनोवृत्ति एवं विलासी वस्तु की भरमार आदि ने आदमी को इतना चमत्कृत, हतप्रभ व विवेक हीन कर रखे हैं कि वे अपनी सभी पसंद की वस्तुओं को उन्हीं के प्रभाव में खरीदने चले जाते हैं। अपनी हैसियत बढ़ाने के लिए बाज़ार में सामान खरीदने वाले उपभोक्ताओं की क़तार को ज्ञानेंद्रपति अपनी आज़ादी उर्फ गुलामी शीर्षक कविता में यों खींचते हैं- आज़ादी के गोल्डन जुबली साल में /आज़ादी का मतलब है/बाज़ार की अपनी पसंद की चीज़ चुनने की आज़ादी/और आपकी पसंद, वे तय करते हैं /जिनके पास उपकरणों के काया बल /विज्ञापनों का माया बल / आपकी आज़ादी पसंद है उन्हें / चीज़ों का गुलाम बनने की आज़ादी।[3]

समय अपने साथ बदलाव लाता है। इस फुरसत में ज़रूरी व गैर ज़रूरी वस्तुओं के प्रचार-प्रसार का बोलबाला रहा है। अब बाज़ार में ज़रूरी चीज़ों का कम और गैर ज़रूरी चीज़ों की ज्यादा माँग है। ये चीज़ें मानव जीवन की ज़्यादा से ज्यादा जगह जमा रही है। उनका वर्चस्व मानव से ज्यादा बढ़ रहा है। वे मानव को वस्तु में बदल डालने की कोशिशें कर रही हैं। इस कदर मानव तो वस्तु के रूप में तब्दील न होने के लिए अवश्य प्रयास भी करते रहते हैं। इस बदलाव से हमेशा के लिए मानव को बचकर रहने की चेतावनी देते हुए कवयित्री कात्यायनी बच निकलना शीर्षक अपनी कविता में यों कहती हैं-चीज़ों के बारे में / सोचने के लिए कहा उन्होंने / हमें, चीज़ों में बदल डालने के लिए।/ हमने सोचा, चीज़ों के बारे में/ चीज़ों में बदल जाने से / बचने के लिए।[4]

प्रस्तुत अवतरण के ज़रिए कवयित्री मानव जीवन पर वस्तुओं का आधिपत्य स्थापित करने की बाजारीकरण की कूट नीति के प्रति अपनी सजगता प्रकट करती है।

आज हर कहीं वैश्वीकरण से उत्पन्न औद्योगिक उपभोक्तावादी संस्कृति फैल रही है। फलस्वरूप बाज़ार में अंतरराष्ट्रीय कंपनियों का वर्चस्व बढ़ रहा है। इस के लिए कवि लीलाधर जगूड़ी उत्पादकों को ज़िम्मेदार मानते हैं। बाज़ार में उत्पादकों द्वारा उपभोक्ता का अधिकतर शोषण ही करते रहते हैं। कवि ग्राहकों की समस्या को इस तरह व्यक्त करते हैं अपनी कविता 'उपभोग का गीत' में-मैं तो एक ग्राहक हूँ /हमेशा एक खरीददार /उत्पादक नहीं भोक्ता/जिसे सिर्फ उपभोक्ता बताना हैं बिचौलिये।[5]

उपभोक्तावादी संस्कृति ने मनुष्य को मानव के रूप में न देख कर एक निर्जीव वस्तु के रूप में तब्दील कर दिया है। फलतः उसमें निहित चेतना एवं विवेक समाप्त हो गए हैं। इस प्रकार मानव आत्म प्रवंचना का शिकार हो गया है। उपभोक्तावाद ने मानव को पदार्थीकृत कर उसे मानवता से कहीं अधिक नीचे गिरा दिया है। उस के लिए प्यार जैसी संवेदना अपना अर्थ खो चुकी है। केदारनाथ सिंह अपनी कविता फर्क नहीं पड़ता में इस प्रकार कहा है- पर सच तो यह है कि यहाँ /या कहीं भी फर्क नहीं पड़ता / तुमने जहाँ लिखा है प्यार/वहाँ लिख दो सड़क/फर्क नहीं पड़ता/मेरे युग का मुहाविरा है / फर्क नहीं पड़ता।[6]

बाज़ारग्रस्त वातावरण पूर्णतया नशीला बन चुका है। उपभोग रूपी नशे में रमते आज के नव मानव अपना सुध-बुध खोकर इसका अन्धानुकरण करते दिखाई देते हैं। इस नशीले बाज़ार का चित्रांकन करती है वीरेन डंगवाल की कविता 'तम्बाकू'। कविता इस सच का अफसोस कराता है कि सख्त मेहनत तथा पूरी यत्न के साथ हमारे खेत में उगाए गए 'तम्बाकू' हमें किस तरह व किस हद तक विध्वंस करने के लिए उत्सुक है।

चलो तो निकल चलो घर से बाहर / फुसफुसाता है रक्तमें छिपा तम्बाकू /इसे भी उगाया था/चौड़े पत्तों वाले इस बदमाश को मेहनती हाथों ने /इतनी लगन और चाव के साथ, खेतों में /हमारे ही हाथों पैदा होते हैं कई बार / हमारे दुश्मन प्यारे-प्यारे।[7]

प्रस्तुत कविता में कवि ने बाज़ार को तम्बाकू बिम्ब के ज़रिए चित्रित कर हमें निगलने के लिए तल्लीन त्रासद वक्तका मूर्तीकरण किया है।

उमा शंकर चौधरी की 'अंततः' 'उसकी आवारगी ही काम आई' कविता बाजारी दुनिया के सुख-विलासिता में फंसे आदमी की क्षति ग्रस्त मानवीय संवेदनाओं को उजागर करने के साथ प्रेम की नई व्याख्या परिभाषित करती है।

बाज़ार बेचने-खरीदने वालों का है। भगवत रावत की मानो न मानो कविता इस सच का खुलासा करता है कि बिक-बिक कर अंततः विक्रेता ही बाज़ार में शेष रहेंगे। निर्मला पुतुल की मैं वो नहीं जो तुम समझते हो कविता बाज़ारूसंस्कृति प्रदत्त पुरुष मानसिकता को उदघाटित करती है।

लीलाधर मंडलोई की कस्बे की दूकान, मंगलेश डबराल की बाज़ार, उमा शंकर चौधरी की तुम्हारी अपनी संस्कृति, आलोक धन्वा की सफेद रात, लीलाधर जगूड़ी की विज्ञापन सुंदरी, उदय प्रकाश की टेलीफोन,राजेश जोशी की खिलौना, अरुण कमल की हाट, एकांत श्रीवास्तव की 'दुनिया के हाट में' शीर्षकीय कविताएँ बाज़ार की जादूगरी में आम आदमी की सच्चाई को परखती हैं।

सारांशतः हिंदी के वर्तमान कवियों ने अपनी कविताओं में बाजारवाद के चपेट में ध्वस्त हो रही हमारे भारतीय सभ्यता व संस्कृति के परंपरागत आदर्शों, मूल्यों, मान्यताओं एवं संस्कारों का सच्चा चित्र उधेड़कर रख दिया है। बाजारू संस्कृति की ओर तब्दील होते मानव समाज को सुरक्षित तथा सजग कराना ही इन कविताओं का ध्येय है।

सन्दर्भ संकेत

1. कुमार अम्बुज-अतिक्रमण, अथ पुरातन कथा, पृ.सं. 100
2. संजय कुंदन-चुप्पी का शोर, प्रबंधक, पृ. सं. 41-42
3. ज्ञानेंद्रपति-संशयात्मा, आज़ादी उर्फ गुलामी, पृ. सं. 123
4. कात्यायनी इस पौरुषपूर्ण समय में, बच निकलना, पृ. सं. 85
5. लीलाधर जगूड़ी अनुभव के आकाश में चाँद, उपभोग का गीत, पृ. सं. 121
6. संपा. परमानंद श्रीवास्तव केदारनाथ सिंहः प्रतिनिधि कविताएँ, फर्क नहीं पड़ता, पृ. सं. 91
7. वीरेन डंगवाल दुष्चक्र में स्रष्टा, तम्बाकू, पृ. सं. 58

सहायक आचार्य, सरकारी ब्रेण्णन कॉलेज तलश्शेरी, कण्णूर
केरल 670 106 , मोबः 9995083552
ईमेलः anzaali2012@gmail.com

एक जाति

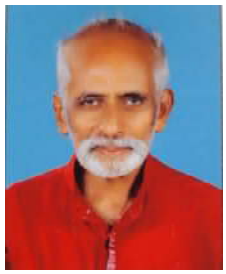

श्रीबुद्ध की तरह श्रीनारायण गुरु की भी जाति की परिकल्पना अत्यंत वैज्ञानिक है। आनुलंशिकी के तात्विक आधार पर अद्वैत का प्रयोग करते हुए उन्होंने मानव समाज को 'एक जाति' के रूप में परिकल्पित किया है। उनके अनुसार यह मानव जाति एक ही स्रोत से या योनि से निकली है, इसका आकार एक जैसा है और इसमें कोई भेद नहीं है, यही उन्होंने 'जीति-निर्णय' नामक कविता में बताया है - "ओरु योनि, ओराकारं, ओरु भेदवुमिल्लितिल।" इस कविता में वे आगे कहते हैं कि एक ही नर जाति से यह नर संतति निकली है, ऐसा विचार करने पर नर की मात्र एक ही जाति है। एक इसी नर-जाति से तथाकथित ब्राह्मण और चांडाल दोनों निकलते हैं, तब फिर नर-नर में क्या अंतर रह जाता है? अंतर कैसे हुआ? वे हम भारतीयों को यह सोचने के लिए उद्बोधित करते हैं कि हमारी संस्कृति के गौरव पराशर मुनि एक चंडालिका से जन्मे थे और वेदों को व्यवस्थित करनेवाले, महाभारत और पुराणों के रचयिता व्यासजी तो एक मछुआरिन की कोख से जनमे थे। उन्होंने अपनी 'जाति लक्षण' शीर्षक कविता में बताया है कि इस दुनिया में पैदा हुए हर एक किस्म के जीव-जंतुओं का अलग-अलग ढंग का शरीर होता है, उनका शब्द, गंध, रुचि, ताप शीत व शक्ति भी अलग-अलग होते हैं। हर किस्म के जीवों को पहचानने के अलग-अलग चिह्न हैं। इसलिए कबीर की तरह वे भी कहते हैं - "सिर्फ नाम, देश और पेशा,

इतना ही पूछना काफी है,

जाति न पूछें किसी से, क्योंकि,

शक्ल स्वयं बताएगी जीति" (जाति का लक्षण)

इस तरह वैज्ञानिक तर्कों के आधार पर गुरु ने मानव की 'एक जाति' का निरूपण किया है।

डॉ.जी. गोपीनाथन द्वारा रचित 'श्रीनारायण गुरु : आध्यात्मिक क्रांति के अग्रदूत' शीर्षक ग्रंथ से उद्धृत। पुस्तक का प्रकाशक है ज्ञान गंगा, नई दिल्ली - 110 002

मलयालम उपन्यास 'इरुमुटिक्केट्ट' का अनुवाद

दूनी गाँठ की गठरी

मूल : के.एल.पॉल

अनुवादः प्रो. डी. तंकप्पन नायर व अधिवक्ता मधु. बी.

सोपान

अठारहवाँ

स्वामिये..... अय्यप्पो.....

अय्यप्पो ..... स्वामिये.....

स्वामी शरणं

अय्यप्पा शरणं....

दूर से निकली शरण मंत्र पुकार की ध्वनि नजदीक होती आ रही है। समीप की शरण मंत्र पुकार की ध्वनि बारीक होती होती मिट जाती है। दूनी गाँठ की गठरी सिर पर धरे एक एकाकी अय्यप्पन भाररहित होकर पहाड से उतरकर आ रहा है। अंधकार में ज्यादा कालिमा के होने पर और उसका वस्त्र काले रंग का होने पर सिर्फ उसकी आँखें ही जरा देख पाता है।

क्या वह प्रांची है? नंदू है? शंभु है? गुरुस्वामी है? अब्दुल्ला है? कॉवरिया स्वामी है?... चिंतामग्न होकर सच्चिदानंद खाट पर उठकर बैठा। तब दर्द की गाँठें एक-एक करके ढ़ीली हुई, फिर खुल गयीं। सच्चिदानंद ने ऊँची आवाज में पुकारा : "लीला....!"

आवाज सुनी तो लीला ने। लेकिन समीप तो आयी है भानुमति।

'लीला देहली पर है। पहाड से उतरकर आये अय्यप्पों का स्वागत करने के लिए' भानुमति ने कहा।

"स्वामिये अय्यप्पो....

अय्यप्पो.... स्वामिये...."

गुरुस्वामी की खुरखुरी आवाज़ सम्मिलित शरणं पुकार में अलग पहचानी गयी।

सिर्फ सच्चिदानंद को सुनने लायक धीमी आवाज में कहा : "नंदू को छोडकर दूसरे सारे अय्यप्पन लोग पहुँच गये।"

"मेरा नंदु कहाँ है...?" सच्चिदानंद खाट से अचानक उठा।

अधिक आशंकायें होने के बावजूद पैरों की चलन-क्षमता पूर्व स्थिति में हो जाने से सच्चिदानंद को अत्यधिक आनंद हुआ।

सच्चिदानंद ने देखा... लौट आये अय्यप्पन लोग एकएक करके गुरुस्वामी के निर्देश के अनुसार गठरियों को नीचे रख रहे थे।

सच्चिदानंद बडबडाया : "मुझे अपने पैर वापस मिले हैं... अब मैं चल सकता हूँ... पहाड़ पर जा सकता हूँ..."

पहले से ही विधिवत् भरी दूनी गाँठ की गठरी को स्वयं सिर पर रखने को जल्दी करनेवाले सच्चिदानंद को रूखे नयनों से देखते हुए गुरुस्वामी ने मना किया.... "नहीं.... ऐसा कभी न करना... कभी

दूनी गाँठ की गठरी को स्वयं सिर पर न रखना है.... उसको सिर पर रखने की सहायता करना गुरु ही है...

गुरु को पहले मनुष्य के रूप में देखा जा सकता है... फिर रूपरहित ब्रह्म में देखना चाहिए। जानना चाहिए वह ब्रह्म में स्वयं हूँ।"

भानुमति ने आनंद और अभिलाष को एक साथ पकड लिया। फिर पकड़ छोड़ दी। बिलकुल निस्संग भाव से सब की ओर नज़र दौडाती हुई खडी रही।

लीला ने गला फ़ाडकर पुकारा : "नंदु..! बेटा नंदु..! .. इतने दिनों तू कहाँ रहा?" लीला सिसक उठी।

"यात्रा में थी... वह अनिवार्य थी..."

तब लीला और सच्चिदानंद ने उनसे भी ज्यादा ऊँचा हुए नंदु के चेहरे पर वात्सल्यपूर्वक सहलाया।

"छः साल पहले का एक तीर्थाटन काल। सन्निधान को लक्ष्य करनेवालों को अंधकार में निमग्न करती घोर बारिश... शबरीपीठ के समीप से मुझको और भानुमति नामक इस अम्मा को हटाकर ले जानेवाला जलप्रवाह.... पंपा लांघने वाले हम दोनों को कोई अज्ञात तीर्थाटक किसी अज्ञात देश में ले गए। हमारी इच्छा और ईश्वर का निश्चय ऐसा ही एक प्रयाण था। इसी बीच किसी समय तीन अद्भुत वैद्य पहुँचे। प्रांची अब्दुल्ला और कॉवरिया स्वामी। उनकी ज्ञानचिकित्सा उस समय हमको अनिवार्य थी। पितापुर, गणकापुरं और नर्सोवादिया में वे हमारे साथ थे। उन्हीं के द्वारा हम ने दत्तात्रेय के अवतार श्रीपादवल्लभ और नरसिंह सरस्वती के विषय में ज्याजा बातें जान लीं।

आखिर अद्भुत वैद्यों से भी वंदित मधुकरनाथ महाराज नामक महायोगी से हमारा मिलन हुआ। हमें मालूम हुआ कि करीब इसी समय पिताजी उनसे मिले। उन्होंने दृढ़ता से कहा कि कोई भी बद्धजीवी मुक्ताजीवी बन सकता है। इसके लिए उन्होंने आशीर्वाद दिया। क्रियायोग दीक्षा भी दी। अद्भुत वैद्यों की एक विशेष योजना के भाग के रूप में भानुमति नामक अम्मा भी वहाँ पहले ही पहुँची। उसके पीछे मैं भी।" इतना कथन पूरा करके नंदु ने सच्चिदानंद, लीला और भानुमति का पादस्पर्श कर वंदन किया। उसके पश्चात गुरुस्वामी की सहायता से नंदु ने दूनी गाँठ की गठरी को नीचे रखा। तब सारा वातावरण ऊँची आवाज़ में शरण मंत्र पुकार से भर गया।

अचानक आंगन में काले वस्त्रधारी, दूनी गाँठ की गठरी रखे तीन अय्यप्पन लोग प्रत्यक्ष हुए...

प्रांची... अब्दुल्ला..... कॉवरिया स्वामी....

आंगन लाँघकर, गेट भी लाँघकर सडक पर उतरनेवाले उनके पीछे दूनी गाँठ की गठरी सिर पर रखे सच्चिदानंद भी शबरिमला को लक्ष्य कर चला।

उन चारों के आगे थोड़ी सी दूरी पर सुगम पथ सुनिश्चित मधुकरनाथ महाराज!

अद्भुत दृश्य के साक्षियों में से एक आत्माराम ने तभी जल्दी में अपना उपन्यास पूरा करके नामकरण किया :

"दूनी गाँठ की गठरी"

स्वयं खुलनेवाले और बंद होनेवाले अध्यायों को अठारह सोपानों के रूप में कल्पना करके परम ज्ञान की लब्धि के लिए उसने शरणमंत्र पुकारा:

"स्वामिये शरणमय्यप्पा....."

* * * * *

ओणम त्योहार मनाते हुए अत्तपूव (फूलों की रंगोली) तैयार रहे हैं।

मंच पर विशिष्ट अतिथि।

गाँधी जयंती के दिन आचार्य के छात्र-छात्रों का स्वच्छता अभियान

RNI No. 7942/1966
Date of Publication :15-10-2023
Date of posting : 20th of Every month

KERALJYOTI

OCTOBER 2023

Vol. No. 60, Issue No.07
Regn. No. KL/TV(S) 381/2022-2024
Price Rs. 25/-

A monthly Publication of Kerala Hindi Prachar Sabha approved for School Libraries by the Education Dept., Govt. of Kerala as per notification No. B-3 / 4036/83 SIE dated 20-9-1985
Approved by University of Kerala as per order No. Ac. A II / 1 / 31965 / Std. Journals/2013 / dtd : 27-6-2013

समापन समारोह का उद्घाटन केरल के विपक्ष के नेता श्री.वी.डी.सतीशन कर रहे हैं।

श्री.टी.पी.श्रीनिवासन, डॉ.एस.तंकमणि अम्मा, डॉ.के.सी. अजयकुमार
कवि मधुसूधनन नायर और डॉ.विजु जेकब भाषण दे रहे हैं।

सभा के पूर्व पदाधिकारियों के चित्रों का अनावरण
पूर्व राजदूत टी.पी.श्रीनिवासन कर रहे हैं।

केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 के लिए मंत्री अ.व. मधु बी द्वारा प्रकाशित; राष्ट्रवाणी मुद्रणालय, केरल हिंदी प्रचार सभा, तिरुवनंतपुरम-695014 में मुद्रित तथा प्रो.डी.तंकप्पन नायर द्वारा संपादित।

Published by the Secretary, Adv. B. Madhu for Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695 014;
Printed at Rashtravani Mudranalaya, Kerala Hindi Prachar Sabha, Tvpm-695 014
and edited by Prof. D. Thankappan Nair